उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

M.COM-405
मानव संसाधन प्रबन्ध-II
Human Resource Management-II

खण्ड 1

निष्पादन तन्त्र (Appraisal System)

इकाई -1 5

कार्य परिचय

इकाई -2 12

निष्पादन मूल्यांकन

इकाई -3 25

कार्य मूल्यांकन

इकाई -4 38

मजदूरी निर्धारण

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

संरचनात्मक सम्पादन

डॉ0 मंजूलिका श्रीवास्तव	निदेशक, दूरस्थ शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली

विषयगत सम्पादन

प्रो0 जगदीश प्रकाश	पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डॉ0 ज्ञान प्रकाश — असिस्टेन्ट प्रोफेसर, प्रबन्ध

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से कर्नल विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा पुनः मुद्रित एवं प्रकाशित, 2024

मुद्रक : चन्द्रकला यूनिवर्सल प्रा0 लि0 42/7 जवाहर लाल नेहरु रोड, प्रयागराज

PEPE-055

M.COM-405/2

खण्ड-3 परिचय

मानव संसाधन प्रबन्धन का एक प्रमुख कार्य ऐसे निष्पादन तन्त्र का विकास करना है जिससे संगठन के कार्य उच्च गुणवत्ता के साथ सहजता पूर्वक सम्पन्न हो सके। इस खण्ड में सर्वप्रथम 'कार्य परिचय' अर्थात् कर्मचारी को संगठन के वातावरण के साथ परिचित कराते हुए इसे संगठन के प्रत्येक पहलू से अवगत कराया जाता है। इसके पश्चात् उसके द्वारा सम्पादित कार्य का मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन की विधियाँ संगठन की प्रकृति एवं आवश्यकता के अनुसार किया जाता है। कार्य मूल्यांकन के अन्तर्गत संगठनों के अन्तर्गत किये जाने वाले कार्यों का मूल्यांकन होता है। जहाँ निष्पादन मूल्यांकन के अन्तर्गत कार्य करने वाले का मूल्यांकन होता है वही कार्य मूल्यांकन के अन्तर्गत स्वयं कार्य का मूल्यांकन होता है। कार्य मूल्यांकन के आधार पर मजदूरी का निर्धारण होता है। अधिक महत्वपूर्ण कार्य की अधिक मजदूरी ततथा कम महत्वपूर्ण कार्यों की कम मजदूरी होती है।

इकाई 1 : कार्य परिचय

इकाई की रूपरेखा

1.1 परिचय

1.2 उद्देश्य

1.3 परिचय कार्यक्रम

1.4 कार्य परिचय की विधि

1.5 पर्यवेक्षकीय परिचय

1.5 पर्यवेक्षक पद के कार्य परिचय के मुख्य तत्व

1.6 सारांश

1.7 बोध प्रश्न

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.1 परिचय

कार्य के प्रारम्भ में नव नियुक्त कर्मचारी कुछ कठिनाई अनुभव कर सकता है, किन्तु यदि उसे कार्य के बारे में पर्याप्त जानकारी दे दी जाय तो वह भली-भाँति कार्य कर सकता है। इस प्रकार ''कार्य परिचय'' व्यक्ति को कार्य के बारे में जानकारी देने तथा सन्निहित समस्याओं को समझाने की प्रक्रिया है। यह नये कार्य की जानकारी के लिए नये कर्मचारी की उत्सुकता को कम करने में सहायक होता है।

इसे परिचय की प्रक्रिया (Process of Induction) सिद्धान्त बोध के नाम से भी जाना जाता है। इसके द्वारा कर्मचारी को संगठन का एक अंग बनाया जाता है तथा कर्मचारी अपने आप को संगठन का एक सदस्य समझता है तथा कार्य के साथ उसका पूर्णतया समायोजन हो जाता है। इसके पश्चात् कर्मचारी को नये कार्य एवं वातावरण में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नहीं होता है। यह कर्मचारियों में कार्य के प्रति तथा संगठन के प्रति अपनत्व की भावना का संचार करती है।

1.2 उद्देश्य

कार्य परिचय का उद्देश्य कर्मचारी को कार्य के प्रति आवश्यक जानकारी देना होता है। उसके मुख्य उद्देश्य निम्न है-

1. नये कर्मचारी को कार्य का महत्व बताना, आवश्यक प्रशिक्षण एवं सम्भावित कठिनाइयों की जानकारी देना।

2. कम्पनी के इतिहास एवं उत्पादन के तिथियों की जानकारी देना।

4. उपक्रम का संगठनात्मक ढांचा, संयन्त्र की स्थिति तथा विभिन्न विभागों के कार्य सम्बन्धी सूचना देना।

4. कर्मचारी को स्वयं के विभाग सम्बन्धी कार्य तथा सामान्य संगठन ने उस विभाग का महत्व बतलाना।

5. कम्पनी की नीतियों, उद्देश्यों तथा नियमों की जानकारी प्रदान करना।

6. सेविवर्गीय विभाग तथा फोरमैन के सम्बन्ध स्पष्ट करना।

7. सेवा की शर्तों एवं मान्यताओं, श्रम-कल्याण सुविधा तथा अन्य उपलब्ध लाभों की जानकारी देना।

8. कार्य के घण्टे, अधिसमय कार्य, भुगतान पद्धति, सुरक्षा एवं दुर्घटना से सुरक्षा, बचाव सम्बन्धी नियम, छुट्टियों, अवकाश तथा थकावट अनुभव होने पर प्रार्थना करने की विधि आदि की जानकारी देना।

9. परिवाद निवारण पद्धति एवं अनुशासन प्रणाली के बारे में सूचित करना।

10. सेविवर्गीय नीतियों एवं सूचना के स्रोत सम्बन्धी परिचय कराना।

11. सामाजिक लाभ तथा मनोरंजनात्मक सुविधाओं की जानकारी देना।

12. पदोन्नति के अवसर, स्थानान्तरण, सुझाव योजनाओं एवं कार्य स्थायित्व सम्बन्धी जानकारी देना।

1.3 परिचय कार्यक्रम

परिचय कार्यक्रम के तीन मुख्य चरण इस प्रकार है-

1. सविवर्गीय विभाग के कर्मचारियों द्वारा सामान्य जानकारी देना।

2. कार्य पर्यवेक्षक या उसके प्रतिनिधि द्वारा कार्य की विशिष्ट जानकारी देना।

4. सेविवर्गीय विभाग या पर्यवेक्षक द्वारा कालान्तर में दोहराने स्वरूप जानकारी देना।

1. प्रथम चरण का कार्य सेविवर्गीय विभाग द्वारा किया जाता है। कर्मचारी को उपक्रम के विभिन्न पहलुओं के बारे में जानकारी उपलब्ध कराने के उद्देश्य से उसे संगठन के इतिहास की जानकारी तथा उसकी कार्य प्रणाली से अवगत कराया जाता है। इसके अतिरिक्त कर्मचारियों को सेवा निवृत्ति नियम, स्वास्थ्य सेवाएँ, श्रम-कल्याण कार्य और सुरक्षात्मक कार्यक्रम जैसे सेवा नियमों की सामान्य जानकारी भी दी जाती है। समस्त जानकरियां एक साथ न देकर धीरे-धीरे देना एक अच्छी नीति का परिचायक है।

2. द्वितीय चरण की जानकारी पर्यवेक्षक द्वारा दी जाती है। यह विशेष जानकारी होती है जिसे देने के लिए फोरमैन को पूर्णतः तैयार रहना पड़ता है। कर्मचारी को विभाग, कार्य का स्थल आदि बताया जाता है। सहयोगी कार्मियों से परिचय, प्रसाधन एवं अल्पाहार गृह की स्थिति तथा समय पर आने सम्बन्धी सूचना आदि दी जाती है। इसके अतिरिक्त विशिष्ट परम्पराओं जैसे कर्मचारी दोपहर का भोजन स्वयं लाते हैं या यही मिलता है, कार्य की पोशाक कम्पनी देगी, आदि बातों की जानकारी दी जाती है। विशिष्ट जानकारी का उद्देश्य यह होता है कि नवागन्तुक कार्य तथा कार्य के वातावरण में अपने आपको समायोजित कर सके।

4. तृतीय चरण कार्य नियुक्ति के कुछ समय बाद प्रारम्भ होता है। यह समय एक सप्ताह से छः माह तक हो सकता है। किसी विशेषज्ञ या फोरमैन द्वारा यह कार्य जानकारी दी जाती है। इसका उद्देश्य यह ज्ञात करना होता है कि कर्मचारी उपलब्ध जानकारी से संतुष्ट है अथवा नहीं, वह कार्य के प्रति संतुष्ट है या नहीं तथा पर्यवेक्षक संतुष्ट है अथवा नहीं।

इस हेतु कर्मचारी से यह पूछा जा सकता है कि क्या उसके कार्य के घण्टे एवं वेतन उतना ही है जितना की नियुक्ति के पूर्व बताया गया था। वरिष्ठ अधिकारियों एवं साथी कर्मचारियों के प्रति उसके क्या विचार है? कार्य परिचय प्रणाली में क्या वह कुछ सुधार चाहता है? या कम्पनी की अन्य किसी नीति में कोई सुझाव देना चाहता है।

इन दोनों को लिखते समय साक्षात्कारकर्ता अपने स्वयं की राय भी बताता है जिससे कर्मचारियों की प्रगति को जाना जा सके। उसी समय पर्यवेक्षक कर्मचारी का मूल्यांकन करते हुए उसके दोष एवं गुणों का उल्लेख करता है। कार्य परिचय का अर्थ न केवल अच्छा व्यवसाय उपलब्ध कराना वरन् नये कर्मचारियों की महत्वाकांक्षाओं को पूर्ण करना भी है।

1.4 कार्य परिचय विधि

वास्तविकि रूप में कार्य परिचय उस समय से प्रारम्भ होता है जब कर्मचारी को अंतिम रूप से चयनित कर लिया जाता है, परन्तु फिर भी साक्षात्कार के समय उसे प्रतीक्षालय में बैठाना, उसे सुविधाजनक वातावरण प्रदान करना, उसके आवश्यक प्रमाण पत्रों की जाँच का कार्य निपटाने आदि बातों का व्यक्ति पर अमिट प्रभाव पड़ता है, इससे वह चयन होने अथवा न होने दोनों ही स्थितियों में लम्बे समय तक प्रभावित रहता है।

कार्य परिचय का प्रथम चरण सुविधाजनक प्रतीक्षालय, प्रश्नों के तुरन्त मृदु एवं भली प्रकार जवाब देने एवं साक्षात्कार क्रम बनाने से प्रारम्भ होता है। कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व आवश्यक कार्यवाहियों को पूर्ण करने का ज्ञान दिया जाता है। इस प्रकार शारीरिक जाँच समय पर आने की सूचना रखना, कार्य करने का अनुज्ञा पत्र प्राप्त करना आदि के पश्चात् कार्य के बारे में विस्तृत जानकारी दी जाती है।

कार्य के प्रथम दिन परिचय अधिकारी को चाहिए कि यथासम्भव नवांगतुकों का अलग समूह तथा इसमें एक पुराना कर्मचारी भी रखे जिससे कर्मचारियों को असुविधा न हो। परिचय अधिकारी नियोजन कार्यालय से नव चयनित व्यक्ति को लेकर कार्य स्थल तक एवं कर्मचारियों को उनके निवास स्थान से कार्य स्थल तक का सीधा रास्ता बताये। कर्मचारियों को यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि कार्य पर जाते समय तथा पुनः कार्य से लौटते समय वे अपने अनुज्ञा पत्र बताकर जाये। इसके पश्चात् व्यक्ति को विभागीय अधीक्षक से मिलना होगा जो उसका परिचय फोरमैन से करायेगा। फोरमैन कार्य पर परिचय करवाता है। इसके उपरान्त परिचय अधिकारी कर्मचारी पर कुछ समय तक नियमित रूप से दृष्टि रखता है तथा यथाशीघ्र निम्न बातों के बारे में पर्याप्त जानकारी देता है-

1. नवागन्तुक को उन सभी क्रियाओं से परिचित कराना जिनमें उसे कार्य करना होता है।
2. कार्य के समय सम्बन्धी जानकारी।
4. विभाग में प्राप्त होने वाले अधिलाभ एवं अन्य पुरस्कार सम्बन्धी जानकारी।
4. कम्पनी के नियम तथा सुरक्षात्मक उपायों की जानकारी।
5. स्नान गृह, मूत्रालय एवं शौचालय की स्थिति सम्बन्धी जानकारी।

6. भोजन अवकाश एवं कैन्टीन सम्बन्धी जानकारी।

7. सुरक्षात्मक वस्तुओं एवं उपायों की जानकारी।

8. परिवाद-निवारण पद्धति, सामूहिक, वार्ता प्रणाली, सुझाव प्रणाली, कार्य निष्पादन, पदोन्नति एवं वरिष्ठता क्रम सम्बन्धी नियमों की जानकारी।

9. शिक्षा एवं प्रशिक्षण सम्बन्धी जानकारी।

10. श्रम कल्याण सम्बन्धी सेवाएँ जो कम्पनी द्वारा उपलब्ध की जाती है।

इन सभी प्रकार की जानकारी से परिचय कराने के लिए एक जाँच सूची का प्रयोग किया जाता है जिससे यह ज्ञात होता है कि सभी आवश्यक जानकारी व्यक्ति विशेष को दे दी गयी है।

1.5 पर्यवेक्षकीय परिचय

नवागन्तुक के लिए परिचय कार्यक्रम का अर्थ यही है कि उसे कार्य प्रणाली एवं अन्य सामान्य व्यवहारों से परिचित करा दिया जाये। पदोन्नति की दशा में भी कार्य परिचय आवश्यक है। पदोन्नति के पश्चात् कर्मचारी कार्य भार सम्भालते ही अपने पूर्व साथियों पर प्रभाव जमाने एवं पर्यवेक्षण करने में सफल नहीं हो पाते। कुछ व्यक्ति पद के अहंकार में अधिकार जमाने की चेष्टा करते हैं जबकि कुछ के व्यवहार में कोई अन्तर नहीं आता है। इस प्रकार के व्यक्ति प्रबन्धकों के सम्मुख कर्मचारियों की बातें, अच्छे, बुरे या तटस्थ रूप में रखते हैं तथा किसी भी उत्तरदायित्व से अपने को अलग रखते हैं। दूसरी प्रकार के व्यक्ति प्रबन्धक के लिए उपयुक्त नहीं होते हैं। अतः यह आवश्यक है कि ऐसे व्यक्ति जो पर्यवेक्षकीय पद पर पदोन्नत किये जायें एवं यह कार्यक्रम विभाग के प्रमुख अधिकारी द्वारा आयोजित किया जाय।

1.6 पर्यवेक्षक पद के कार्य परिचय के मुख्य तत्व

1. पदोन्नत व्यक्ति जो पहले श्रमिक था परन्तु अब प्रबन्धक का प्रतिनिधि हो गया है, उसे कम्पनी की नीतियों, कार्यक्रमों, उद्देश्यों तथा संगठन का पर्याप्त ध्यान रखना चाहिए।

2. अपने स्वयं के कार्य तथा अधीनस्थों के कार्य का उत्तरदायित्व का वहन करना चाहिए।

4. कम्पनी के हितों का ध्यान रखते हुए उसे वर्तमान स्थिति में निर्णय लेना तथा समस्याओं का समाधान करना होता है।

4. पहल करने की क्षमता का प्रयोग करते हुए उसे कई समस्याओं पर निर्णय लेना पड़ता है।

5. श्रम सम्बन्धों एवं अन्य कार्यकारी क्षेत्रों के सफलतापूर्वक प्रयोग के लिए उसे कम्पनी की नीतियों का पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए।

6. उसे अपने अधिकारियों, सहयोगियों तथा अधीनस्थ कर्मचारियों के साथ उचित व्यवहार करना चाहिए।

7. उसे विभिन्न प्रशिक्षणों एवं विकास के प्रयत्नों के आधार पर विभिन्न क्षेत्रों में विशिष्टता प्राप्त करनी चाहिए।

1.7 सारांश

संगठन में प्रवेश करने वाला कर्मचारी संगठन के बारे में बहुत सी चीजें जानता है जिसके कारण कार्य को सुचारू ढंग से संचालित करना एक कठिन कार्य होता है। संगठन की नीतियों, उद्देश्यों, कार्य प्रणालियों आदि के बारे में कर्मचारी को ज्ञान होना आवश्यक होता है। परिचय कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रमुख रूप से तीन चरण होते हैं। इसके अन्तर्गत सेविवर्गीय विभाग के कर्मचारियों द्वारा सामान्य जानकारी, कार्य पर्यवेक्षक द्वारा विशिष्ट जानकारी देना तथा सेविवर्गीय द्वारा कालान्तर से दोहराये जाने वाले कार्य स्वरूप की जानकारी देना। कार्य परिचय कार्यक्रम का प्रारम्भ कर्मचारी के साक्षात्कार से ही प्रारम्भ होता है जहाँ से उसे आवश्यक जानकारी उपलब्ध करायी जाती है। इस क्रम में उसे संगठन से सम्बन्धित प्रत्येक कार्य एवं प्रक्रिया से परिचित कराया जाता है। पर्यवेक्षकीय परिच्य कार्यक्रम के अन्तर्गत पर्यवेक्षकीय पद पर प्रोन्नत किये गये कर्मचारियों को कार्य परिचय कराया जाता है। इसका महत्वपूर्ण कारण यह है कि पर्यवेक्षक एक महत्वपूर्ण पद होता है जिस पर कार्य करने वाला व्यक्ति संगठन के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। अतः उसका परिचय कार्यक्रम अत्यन्त सावधानी पूर्वक कराया जाना चाहिए। इसके अन्तर्गत पर्यवेक्षक की पहल करने की योग्यता, स्वयं के कार्य तथा अधीनस्थों के कार्य का उत्तरदायित्व के साथ-साथ कर्मचारियों के साथ उचित व्यवहार करना चाहिए। इस प्रकार कार्य परिचय द्वारा किसी व्यक्ति को संगठन की आवश्कताओं के अनुरूप बनाया जाता है।

1.8 बोध प्रश्न -

प्र01. कार्य परिचय से आप क्या समझते हैं? इसके प्रमुख चरणों को समझाइये।

प्र02 कार्य परिचय विधि का वर्णन करें तथा अधिकारी द्वारा कर्मचारी को किन बातों की जानकारी देना चाहिए ?

प्र03 पर्यवेक्षकीय परिचय से क्या समझते हैं? पर्यवेक्षक पद के कार्य परिचय के मुख्य तत्वों को बताइये।

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. डॉ0 ममोरिया, मानव संसाधन प्रबन्ध, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा-2009

2. प्रो0 रमेशचन्द्र अग्रवाल, सेविवर्गीय प्रबंध एवं औद्योगिक संबंध, नवयुग साहित्य सदन, आगरा।

4. पी0 सुब्बाराव, पर्सनेल/ह्यूमन रिसोर्स मैनेजमेन्ट, कोनार्क पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

इकाई 2 : निष्पादन मूल्यांकन

इकाई की रूपरेखा

2.1 परिचय

2.2 उद्देश्य

2.3 निष्पादन मूल्यांकन

2.4 निष्पादन मूल्यांकन के उद्देश्य

2.4.1 आकस्मिक अनियोजित मूल्यांकन

2.4.2 पारस्परिक तथा सुनियोजित मूल्यांकन

2.4.3 व्यवहार प्रणाली

2.5 कार्य मूल्यांकन कार्यक्रम के चरण

2.6 निष्पादन मूल्यांकन विधियाँ

2.6.1 सीधी क्रमविधि

2.6.1 श्रेणीकरण

2.6.3 व्यक्ति दर व्यक्ति तुलना

2.6.4 बलात् वितरण विधि

2.6.5 आरेखीय क्रम निर्धारण विधि

2.6.6 बलपूर्ण चुनाव वितरण

2.6.7 संक्रमणीय प्रसंग विधि

2.6.8 जांच सूची

2.6.9 उपलब्धियाँ के अनुसार मूल्यांकन

2.7 निष्पादन मूल्यांकन कार्यक्रम की विशेषताएँ

2.8 निष्पादन मूल्यांकन के गुण

2.9 निष्पादन मूल्यांकन के दोष

2.10 क्षमता मूल्यांकन

2.11 सारांश

2.12 बोध प्रश्न

2.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.1 परिचय

किसी भी संगठन की सफलता उसके कर्मचारियों द्वारा निष्पादित कार्यों पर निर्भर करती है। अतः यह आवश्यक है कि कर्मचारियों का निष्पादन मूल्यांकन यथार्थ रूप से किया जाय एवं प्राप्त कमियों को दूर करने के उपाय किये जाए। निष्पादन मूल्यांकन के द्वारा निष्पादित कार्य एवं क्षमता मूल्यांकन द्वारा उसकी कार्य करने की क्षमता का आकलन किया जाता है। निष्पादन मूल्यांकन करने की अनेक विधियाँ प्रचलित है जो संगठन की आवश्यकता के अनुसार निर्धारित की जाती है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सक्षम होंगे -

- निष्पादन मूल्यांकन की आवश्यकता को समझने में।
- निष्पादन मूल्यांकन का महत्व समझने में।
- निष्पादन मूल्यांकन की विधियों एवं तरीकों के बारे में जानने में।
- निष्पादन मूल्यांकन के गुण व दोष जानने में।
- क्षमता मूल्यांकन के बारे में जानने में।

2.3 निष्पादन मूल्यांकन

निष्पादन मूल्यांकन कर्मचारियों के कृत्य एवं परिणामों का अध्ययन एवं आंकलन है। इस अध्ययन एवं आकलन द्वारा कर्मचारियों की कार्य क्षमता में वृद्धि के लिए आवश्यक प्रयास किये जाते हैं।

डेल योजोर के अनुसार-''निष्पादन मूल्यांकन'' अथवा 'कर्मचारी मूल्यांकन' शब्द का आशय उन समस्त औपचारिक कार्यविधियों से है जिनका प्रयोग कार्यरत संगठनों में कर्मचारियों के लिए किया जाता है' एडविन फिलिप्पों के अनुसार-''निष्पादन मूल्यांकन किसी कर्मचारी का उसके वर्तमान कार्य के सम्बन्ध में तथा उच्चतर कार्य के लिए उसकी क्षमताओं का व्यवस्थित आवधिक एवं जहाँ तक मानवीय ढंग से सम्भव हो, एक निष्पक्ष अंकन है।''

अतः निष्पादन मूल्यांकन से आशय विभिन्न स्तरों पर कार्य कर रहे कर्मचारियों के योग्यता स्तर का पता लगाने के लिए उपयोग में लाई जाने वाली विधि से है। यह

मूल्यांकन कर्मचारी के पदोन्नत होने एवं विकास में ही सहायक नहीं होता अपितु उसके निष्पादन स्तर सुधार में भी सहायक होता है।

2.4 निष्पादन मूल्यांकन के उद्देश्य

- कर्मचारियों की योग्यताओं के सम्बन्ध में उच्चतर अधिकारी द्वारा तर्कसंगत मूल्यांकन का विकास।
- नवीन एवं पूर्व प्रशिक्षित कर्मचारियों की प्रगति का अभिलेख उपलब्ध कराना।
- कर्मचारी प्रशिक्षण की नवीन एवं परिवर्तित आवश्यकताओं का ज्ञान।
- कर्मचारियों की पदोन्नति, स्थानान्तरण आदि के यथार्थपरक आधारों की उपलब्धि।
- कर्मचारियों को उनके उच्चतर अधिकारी के उनके सम्बन्ध में विचारों का ज्ञान।
- पारिश्रमिक वृद्धि के औचित्य का आधार निर्माण करना।
- परिवेदनाओं का कम करना।
- कर्मचारी को उसके निष्पादन स्तर के बारे में जानकारी देकर व्यक्तिगत और समूह विकास के बनाये रखना।

2.4 निष्पादन मूल्यांकन के प्रकार -

सामान्यतः निष्पादन मूल्यांकन तीन प्रकार से किया जाता है-

2.4.1 आकस्मिक, अनियोजित तथा विश्रृंखला मूल्यांकन -

इस प्रणाली में किसी निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार कर्मचारियों का मूल्यांकन नहीं किया जाता है। सामान्यतः व्यक्तिगत अवलोकन के आधार पर उच्चाधिकारी अपने अधीनस्थ का मूल्यांकन करते हैं।

2.4.2 पारस्परिक तथा सुनियोजित मूल्याकंन

इस प्रणाली के अन्तर्गत कर्मचारी की विशेषताएँ एवं उसका योगदान दोनों बातें सम्मिलित की जाती है। सभी कार्यों के मूल्यांकन में एक ही प्रणाली प्रयोग की जाती है जिससे विभिन्न व्यक्तियों के मूल्यांकन निर्णयों की आपस में तुलना की जा सके।

2.4.3 व्यवहार प्रणाली -

इस प्रणाली में प्रबन्ध एवं कर्मचारी सम्मिलित रूप से लक्ष्यों का निर्धारण करते हैं जिसमें पर्यवेक्षक सर्वेसर्वा होता हैं। पर्यवेक्षक समय-समय पर व्यक्ति की परख एवं आलोचना करता है। अतः इस प्रणली में सभी दोषों को दूर करने के लिए मिल-जुलकर लक्ष्य निर्धारण की व्यवस्था की गई है। इसमें कर्मचारी तथा कार्य मूल्यांकनकर्ता दोनों सामूहिक रूप से कार्य प्रगति की समीक्षा करते हैं, जिससे सहयोग के आधार पर आवश्यक सुधार किया जा सके।

2.5 निष्पादन मूल्यांकन कार्यक्रम के चरण-

व्यक्ति के विकास के लिए मूल्यांकन क्रियाविधि आवश्यक है। ऐसा विकास कार्य निष्पादन तथा नयी तकनीकि ज्ञात करने में सहायक होता हैं। मूल्यांकन कार्यक्रम के निर्धारण में निम्न चरण होते हैं।

1. कार्य एवं उत्तरदायित्वों का विश्लेषण-

मूल्यांकन कार्यक्रम के प्रथम-चरण में कर्मचारियों के कार्य एवं उत्तरदायित्वों का विश्लेषण किया जाता है। यह कार्य अधीनस्थ कर्मचारियों से विचार-विमर्श के पश्चात् किया जाना चाहिए।

2. कार्य निष्पादन के प्रमाप निर्धारित करना -

अधीनस्थ कर्मचारी से विचार-विमर्श करके पर्यवेक्षक उचित प्रमाप निर्धारित करते हैं जो यथासम्भव सही रूप में क्रियान्वयन के लिए आवश्यक होते हैं।

1. कार्य निष्पादन का पर्यवेक्षण करना।

2. कर्मचारी की योग्यता का मूल्यांकन करना तथा इनके विकास के अवसरों का अनुमान लगाना।

4. मूल्यांकन रिपोर्ट के बारे में विचार-विमर्श करना तथा उसके गुण व दोषों को स्पष्ट करना। कर्मचारी का उचित मार्गदर्शन द्वारा कुशलतापूर्वक कार्य करने के लिए प्रेरित करना।

4. विशिष्ट प्रकार के कार्यों द्वारा कर्मचारी को प्रशिक्षित कर उन्हें अधिकाधिक निर्णयन के अवसर प्रदान करना तथा कर्मचारी को अपना उत्तरदायित्व समझने का अवसर प्रदान करना।

5. प्रगति की समीक्षा एवं मूल्यांकन

6. कार्य को मान्यता देना तथा

7. मूल्यांकन के आधार पर नये लक्ष्य निर्धारित करना।

2.6 निष्पादन मूल्यांकन विधियाँ -

कर्मचारियों के निष्पादन का मूल्यांकन करने की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं। विभिन्न कार्यों को तुलनात्मक दृष्टि से देखने पर प्रचलित प्रणालियाँ कर्मचारी की निष्पादन योग्यता आंकने में सहायक होती है। मूल्यांकन की प्राचीन विधियाँ जहाँ पूर्वाग्रहों से ग्रसित थी, वहीं आधुनिक विधियाँ अधिक न्याय संगत एवं तर्क पर आधारित हैं। मूल्यांकन की निम्न विधियाँ प्रचलित हैं :-

1. सीधी क्रम विधि।

2. श्रेणीकरण।

4. व्यक्ति से व्यक्ति की तुलना।

4. बलात् वितरण विधि।

5. आरेखीय क्रम निर्धारण मान।

6. बलात् चुनाव वर्णन विधि।

7. आलोचनात्मक प्रसंग विधि।

8. जाँच सूची ।

9. उपलब्धियों के अनुसार मूल्यांकन।

2.6.1 सीधी क्रम विधि -

यह प्राचीन एवं सरल विधि हैं, इसमें मूल्यांकनकर्ता द्वारा व्यक्ति एवं उसका निष्पादन एक ही माना जाता है अर्थात् व्यक्ति को उसके कार्य निष्पादन से अलग नहीं किया जा सकता है। इसमें एक व्यक्ति की तुलना सीधे दूसरे व्यक्ति से की जाती है। व्यक्ति को क्रम उसकी योग्यता के आधार पर दिया जाता है। अलग-अलग समूहों के लिए अलग-अलग सूचियाँ बनायी जाती हैं तथा प्रत्येक वर्ग को एक दूसरे की तुलना में रखा जाता है। यह एक अधिकतम कुशल व्यक्ति को न्यूनतम व्यक्ति के पृथक करने की सीधी विधि है।

इस विधि में कई कर्मचारियों की एक साथ आपस में तुलना करने तथा उनका योग्यता क्रम निर्धारित करन अत्यधिक कठिन है। अतः तुलना के लिए युगल तुलना तकनीक को अपनाया जाता है इसमें एक कर्मचारी की एक समय में तुलना प्रत्येक अन्य कर्मचारी के साथ की जाती है। इस विधि के प्रत्येक निर्णय में सिर्फ दो व्यक्ति शामिल होंगे अतः कुल निर्णयों की संख्या का निर्धारण निम्न सूत्र से किया जाता है-

तुलनाओं के संख्या = N(N-1)/2

उपरोक्त सूत्र में N का आशय तुलना की जाने वाली व्यक्तियों की सख्या से हैं। इन तुलनाओं के परिणामों के द्वारा साख वृद्धि किया जाता है जो कर्मचारी जितनी अधिक बार दूसरे कर्मचारियों से श्रेष्ठ समझा जाता है वह योग्यता क्रम में श्रेष्ठ होता है।

2.6.2 श्रेणीकरण -

इस विधि में योग्यता की श्रेणियाँ पहले से तैयार कर उन्हें परिभाषित कर दिया जाता है। जो इस प्रकार हो सकती है-उत्कृष्ठ, बहुत अच्छा, सन्तोषप्रद और असन्तोषप्रद। श्रेणियाँ निर्धारित करने के पश्चात् कर्मचारी योग्यता के विभिन्न घटकों को ये श्रेणियाँ प्रदान की जाती है। यह विधि कृत्य मूल्यांकन में भी अपनायी जाती है।

2.6.3 व्यक्ति दर व्यक्ति तुलना -

इस विधि का प्रयोग सेना द्वारा प्रथम विश्व युद्ध के दौरान किया गया। इसमें व्यक्ति की योग्यता को नेतृत्व, पहलपन, निर्भरता जैसे घटकों में विभाजित करके इनके आधार पर तुलना की जाती है। इन घटकों की तुलना के लिए पैमान विकसित किया जाता है जिसके आधार पर योग्यता अंकन किया जाता है। वह व्यक्ति जिसमें एक विशिष्टता (जैसे - पहलपन) अधिकतम हो पैमाने के उच्चतम सिरे के अंकन तथा वह जिसमें उस विशिष्टता का न्यूनतम अंश हो पैमाने के न्यूनतम सिरे का अंकन प्रदान किया जाता है। शेष व्यक्तियों को इस पैमाने के चरम बिन्दुओं के बीच में रखा जाता है। इसमें प्रत्येक विशिष्ट घटक की मात्राओं को परिभाषित करने के बजाय इन मात्राओं का प्रतिनिधत्व करने वाले विशिष्ट व्यक्तियों का प्रयोग किया जाता है। इसमें मूल्यांकनकर्ता अपने विचार के अनुसार यह पैमाना विकसित करता है।

इस तरह इस विधि में सम्पूर्ण व्यक्ति की सम्पूर्ण व्यक्ति से तुलना करने के बजाय प्रमुख घटकों के आधार पर सेविवर्गीयों की तुलना की जाती है। इस विधि का प्रयोग

आजकल कृत्य मूल्यांकन में किया जाता है, इसे घटक तुलना प्रणाली के नाम से जाना जाता है। यह विधि व्यक्ति की विशिष्टताओं की अपेक्षा कृत्य के मूल्यांकन के लिए अधिक उपयुक्त है। विशिष्टताओं को लेकर अंकनकर्ताओं के अपने विचार हो सकते हैं। अतः इन योग्यता अंकनों की तुलना एक विभाग से दूसरे विभाग में नहीं हो सकती है।

2.6.4 बलात् वितरण विधि -

मूल्यांकनकर्ताओं की अभिनति को कम करने के लिए इस विधि का प्रयोग किया जाता है। इसमें सभी व्यक्ति श्रेष्ठतम या निकृष्टतम श्रेणी में नहीं रखे जा सकते हैं। इनमें मूल्यांकन कर्ता को एक श्रेणीकरण पूर्व निर्धारित करके दे दिया जाता है। इस पूर्व-निर्धारित वितरण में से अपनी चयनित श्रेणी को ज्ञात करना पड़ता है।

इस पद्धति में एक पाँच बिन्दु मापक को कर्मचारी का वर्गीकरण करने में प्रयुक्त किया जाता है। इस पद्धति में श्रेणीकरण का आधार इस प्रकार प्रति को पूरा प्रतिशत लिखे निश्चित किया जाता है 10 प्रति0 बहुत अच्छे, 20 प्रति0 अच्छे, 40 प्रति0 सन्तोषप्रद, 20 प्रति उत्तम था 10 प्रति0 सामान्य से कम या असन्तोषप्रद्। यह वितरण विधि इस मान्यता पर आधारित है कि कुल सेविवर्गीय में ऐसे 10 प्रात0 प्रथम श्रेणी में, 20 प्रति द्वितीय श्रेणी में, 40 प्रति0 मध्य श्रेणी में, 20 प्रति0 चतुर्थ श्रेणी में तथा 10 प्रति0 निम्नतम श्रेणी में रखे जाने चाहिए।

2.6.5 आरेखीय क्रम निर्धारण मान -

कर्मचारी मूल्यांकन में रेखीय पैमाना का सर्वाधिक उपयोग किया जाता है। इसमें कुछ निश्चित योग्यता घटकों के लिए रेखीय पैमाने का निर्धारण किया जाता है। यह विधि 'व्यक्ति दर व्यक्ति' तुलना विधि से मिलती जुलती है। अन्तर सिर्फ यह है कि घटक पैमाने पर योग्यता को 'परिभाषाओं' द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा नहीं।

इस प्रकार इस विधि में कर्मचारी योग्यता अंकन के लिए कुछ घटकों को आधार बनाया जाता है। प्रत्येक घटक को कुछ पैमाने में विभक्ति कर दिया जाता है और प्रत्येक पैमाने स्तर को परिभाषित कर दिया जाता है।

रेखीय पैमाना में घटकों का चयन महत्वपूर्ण व आलोच्यपूर्ण है। इसके दो प्रकार हो सकते हैं- विशेषताएँ- जैसे पहलपन और निर्धनता, योगदान जैसे-कार्य की मात्रा व

गुणवत्ता। चूंकि अनेक कार्य निष्पादन को वस्तुनिष्ठ रूप से मापा नहीं जा सकता इसलिए रेखीय पैमाने में विशेषताओं व योगदानों दोनों का उपयोग किया जाता है। इसमें योगदानों पर अधिक जोर दिया जाता है। इसमें उपयोग किए जाने वाले सामान्य घटक इस प्रकार है कार्य की मात्रा व गुणवत्ता सहयोग व्यक्तित्व, बहुविज्ञता, नेतृत्व, सुरक्षा, कार्यज्ञान, उपस्थित, निष्ठा, निर्भरता, और पहलपन।

यह उपयोग में सरल व आसान विधि है। इसमें प्रत्येक कर्मचारी की अन्य कर्मचारियों के साथ तुलना की जा सकती है। लेकिन इसका दोष यह है कि इसमें कर्मचारी की एक कमी उसके दूसरे गुण की अधिकता से ढक जाती है। इसके अतिरिक्त इसमें उद्देश्यपरक मूल्यांकन न होने से पक्षपात होने की सम्भावना रहती है। इसमें घटकों तथा निष्पादन के बीच सम्बन्ध स्पष्ट नहीं है।

2.6.6 बलपूर्वक चुनाव वितरण -

मूल्यांकन की अन्य विधियों का दोष यह है कि मूल्यांकनकर्ता मूल्यांकन करने में पक्षपात कर सकता है। यह पूर्वाग्रह से ग्रसित हो सकता है। इस विधि का विकास इस कमी को दूर करने के लिए किया गया है। इसमें मूल्यांकनकर्ता को समान मूल्य वाले कथनों में से किसी एक के चयन के लिए विवश किया जाता है। इस प्रकार सकारात्मक एवं नकारात्मक कथन चाहे मूल्यांकिती पर लागू होते हैं या नहीं, किन्तु मूल्यांकन को इनमें से किसी एक कथन का चयन करना ही होता है। इस कथनों में से एक श्रेष्ठ निष्पादन से जुड़ा होता है और यह बात मूल्यांकनकर्ता से गोपनीय रखी जाती है। यह मूल्यांकन कुंजी वर्तमान कर्मचारियों का अध्ययन करके बनायी जाती है।

इस विधि का प्रमुख दोष यह है कि मूल्यांकन कुंजी को गुप्त रखना कठिन है। इससे कर्मचारी विकास के मामले में कोई सहायता नहीं मिलती है। इस विधि द्वारा मूल्यांकन या मूल्यांकिती कर्मचारी सुधार की आवश्यकता की दिशा का निर्धारण नहीं कर पाते हैं। इसमें मूल्यांकन की स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है। उन्हें लगता है कि उन्हें वे निर्णय लेना है जो उन्हें नहीं लेने चाहिए। इसलिए इस विधि का उपयोग व्यापक रूप में नहीं किया जाता है।

2.6.7 संक्रमणीय प्रसंग विधि -

इसके अन्तर्गत कर्मचारी की क्षमता का मूल्यांकन किसी विशेष घटना के आधार

पर किया जाता है जिन्हें संक्रमणीय घटनाएँ कहा जाता है। प्रत्येक कर्मचारी के व्यवहार में कुछ ऐसी विशेषताएँ होती है। जिनके कारण वह सफल या असफलत हो जाता है तथा जिसकी पहचान कठिन परिस्थितियों में ही हो पाती है। संक्रमणीय घटनाएँ निम्न पहलुओं से जुड़ी हो सकती है-

1. शारीरिक दशाएं, 2. समन्वय की एकता, 4. जाँच एवं निरीक्षण 4. कठिन गणनाएं, निर्णय तथा बुद्धि, 6. यन्त्रों उपकरणों की जानकारी 7. उत्पादकता, 8. विश्वसनीयता 9. प्रतिवेदन का सही प्रस्तुतीकरण 10. विभागीय आवश्यकताओं को महत्व देना। 11 अन्य व्यक्तियों के साथ सहयोग 12 पहल करना 13 उत्तरदायित्व का निर्वाह करना।

इस विधि में पर्यवेक्षक के पास सभी घटनाओं का लिखित विवरण रहता है जो समय-समय पर सामयिक मूल्यांकन करते समय प्रयोग में लाया जाता है। कर्मचारियों को कार्य निष्पादन की दृष्टि में मूल्यांकित करना ही मूल्यांकन प्रणाली की सफलता की कुंजी होती है। अक्सर नीची श्रेणी प्राप्त व्यक्ति पदोन्नति के लिए सक्षम समझा जाता है क्योंकि विषम परिस्थितियों में वह संगठन को कठिनाई से बचाता है। इस प्रकार इस पद्धति द्वारा व्यक्ति की निष्पक्ष परख होती है, परन्तु कर्मचारी का सही मूल्यांकन न हो पाना इस प्रणाली का मुख्य दोष है।

2.6.8 जाँच सूची -

इस विधि में मूल्यांकनकर्ता कर्मचारी निष्पादन का मूल्यांकन नहीं करता, बल्कि एक प्रतिवेदन कार्य के बारे में प्रस्तुत करता है। यह प्रतिवेदन कर्मचारी के कार्य व्यवहार के सम्बन्ध में होता है। इसके आधार पर सेविवर्गीय विभाग उस कर्मचारी का मूल्यांकन करता है।

इसमें कर्मचारी और उसके व्यवहार के बारे में अनेक प्रश्न होते हैं। मूल्यांकनकर्ता प्रश्नों का उत्तर कर्मचारी की योग्यता को ध्यान में रखते हुए हाँ या नहीं में देता है। इन प्रश्नों को भारंकित किया जा सकता है। इससे प्रत्येक गुण को पृथक-पृथक महत्व मिल सकता है। इसके अतिरिक्त, इसमें एक ही गुण का मूल्यांकन करने के लिए भिन्न-भिन्न रूपों में प्रश्न दिए जा सकते हैं ताकि मूल्यांकनकर्ता के पक्षपात या उसकी गलती का मूल्यांकन पर प्रतिकूल प्रभाव न हो।

इस विधि का लाभ यह है कि इसमें व्यक्तिपरकता की मात्रा कम होती है।

व्यक्तिगत पक्षपात कम किया जा सकता है। इस विधि का मुख्य दोष यह है कि कर्मचारी की विशेषताओं व योगदानों के बारे में दिए गये कथनों का विश्लेषण करना व उन्हें भार देना दुष्कर कार्य है। इसके अतिरिक्त कर्मचारियों के प्रत्येक गुण की पारस्परिक तुलना नहीं की जा सकती है।

2.6.9 उपलब्धियों के अनुसार मूल्यांकन -

यह निष्पादन मूल्यांकन की आधुनिकतम विधि है इस विधि में पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के अनुसार अधीनस्थ कर्मचारियों के कार्य का प्रबन्धकों द्वारा मूल्यांकन किया जाता है। इसमें श्रमिक का कार्य के प्रति व्यवहार रूचि का अध्ययन भी किया जाता है। मूल्यांकन से प्राप्त निर्णय कार्य अवलोकन तथा निष्पादन पर आधारित होते हैं, न कि वरिष्ठ अधिकारियों की सलाह पर। इसके प्रमुख तत्व निम्न है-

1. कार्य तथा उत्तरदायित्व का निर्धारण वरिष्ठ अधिकारी तथा कर्मचारी मिलकर करते हैं। सम्भावित उपलब्धियों का अनुमान लगाते हुए वे मुख्य उत्तरदायित्व का निर्धारण वरिष्ठ अधिकारी तथा कर्मचारी मिलकर करते हैं। सम्भावित उपलब्धियों का अनुमान लगाते हुए वे मुख्य उत्तरदायित्व तथा कार्य के जटिल स्तरों का निर्धारण करते हैं।

2. अधीनस्थ कर्मचारी अपने लक्ष्यों एवं उद्देश्यों का निर्धारण पहले से एक वर्ष या छः माह के लिए करते हैं। तत्पश्चात् नियोजन के समय पर्यवेक्षक के साथ विचार-विमर्श कर उसमें आवश्यक संशोधन करते हैं। इस प्रकार संयुक्त रूप से लिए गये निर्णयों के अनुसार कार्य किया जाता है।

4\. आपसी विचार-विमर्श द्वारा वे अधिक ठोस निर्णय लेने में समर्थ होते हैं।

4\. पर्यवेक्षक कार्य निष्पादन के उपरान्त कर्मचारियों के कार्य का मूल्यांकन करता है तथा उसकी पूर्व निर्धारित लक्ष्यों से तुलना करता है।

5\. पर्यवेक्षक पुनरावलोकन साक्षात्कार में उपलब्धियों का विवरण प्रस्तुत करता है तथा मूल्यांकन के समय अधीनस्थ कर्मचारी के साथ-विचार विमर्श करता है। इस समय लक्ष्यों, उद्देश्यों तथा कार्यविधियों में आवश्यक सुधार किया जाता है।

6\. मूल्यांकम में व्यक्तिगत गुणों तथा निष्पादन उपलब्धियों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता वरन् कर्मचारी को सामान्य उपलब्धियों का विवेचन किया जाता है।

उपलब्धियों के अनुसार मूल्यांकन को सोद्देश्य प्रबन्ध तथा उपलब्धियों के अनुसार प्रबन्ध भी कहा जाता है।

2.7 निष्पादन मूल्यांकन कार्यक्रम की विशेषताएँ

- सहयोग प्राप्ति
- सरलता
- सूचना
- समन्वय
- सामयिक विचार विमर्श
- पुनः अवलोकन

2.8 निष्पादन मूल्यांकन के गुण -

- पारितोषक एवं दण्ड की प्रक्रिया में सहायक।
- पदोन्नति योग्य कर्मचारियों की जानकारी।
- भावी प्रशिक्षण विकास की सम्भावनाओं का ज्ञान।
- उत्तम तथा प्रभावशाली पर्यवेक्षण।
- कर्मचारी का आत्म विकास।
- कर्मचारी मनोबल बनाये रखने में सहायक।
- योग्य एवं महत्वाकांक्षी व्यक्तियों के लिए आकर्षण।

2.9 निष्पादन मूल्यांकन के दोष -

- निष्पादन मूल्यांकन में आवश्यक धन तथा समय नष्ट होता है।
- मूल्यांकन का कर्मचारियों की विपरीत मनोदशा पर प्रभाव पड़ता है।
- मूल्यांकन के समय उसके कार्य का जोश कम रहता है। मूल्यांकन के परिणामों की अनिश्चितता के कारण उनके मन में घबराहट रहती है और वे अपने कार्य पर ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते हैं।
- कर्मचारियों का निष्पक्ष मूल्यांकन सरल कार्य नहीं है। मूल्यांकन में व्यक्तिगत पक्षपात की सदैव गुंजाइश रहती है और इसका यथार्थपरक होना संदिग्ध रहता है।

– जब मूल्यांकन एक से अधिक व्यक्तियों द्वारा किया जाता है, तो विचार भिन्नता के कारण मूल्यांकन भी भिन्न-भिन्न हो सकता है।

– ऐसे व्यक्ति जो योग्यता के आधार पर श्रेष्ठ पाये जाते हैं, वे तुरन्त पदोन्नति की मांग करें लगते हैं। पदोन्नति न मिलने पर उनके हृदय में कुण्ठाये जन्म लेने लगती हैं।

– निष्पादन मूल्यांकन के आधार पर पदोन्नति की व्यवस्था से वरिष्ठता का महत्व कम हो जाता है और यह भी कर्मचारी असन्तोष का कारण सिद्ध होता है।

2.10 क्षमता मूल्यांकन -

परिणाम को प्राप्त करने के लिए किये गये वर्तमान निष्पादन का पदोन्नति की क्षमता से सम्बन्धित नहीं किया जा सकता है। निष्पादन मूल्यांकन प्रक्रिया कर्मचारी की वास्तविक स्थिति को सही रूप में व्यक्त करने में सक्षम नहीं होती है। क्षमता मूल्यांकन का उद्देश्य कर्मचारी की किसी अधिक महत्वपूर्ण कार्य को करने की योग्यता का अनुमान लगाना होता है। क्षमता मूल्यांकन निम्न कारणों से आवश्यक होता है।

– भविष्य की संभावनाओं के बारे में कर्मचारी को सूचित करना।

– प्रबन्ध उत्तराधिकार योजना को बनाने में सगठन को सक्षम बनाना।

– प्रशिक्षण एवं नियुक्ति कार्यक्रम को आधुनिक बनाना।

– कर्मचारियों को वृत्ति सम्भावनाओं को बढ़ाने के बारे में सलाह देना।

क्षमता मूल्यांकन का लक्ष्य कर्मचारियों की योग्यता एवं आकांक्षा को संघटन की आवश्यकता के अनुरूप बनाना है। उच्चस्थ अधिकारियों की एक मूलभूत समस्या यह है कि वे अपने अधीनस्थें का आकलन उनकी कार्य क्षमता के आधार पर न करके उनके द्वारा प्राप्त सफलताओं के आधार पर करते हैं। क्षमता मूल्यांकन का एक नकारात्मक पक्ष यह है कि यह कर्मचारियों के मनोबल को गिरा देता है। अतः यह मूल्यांकन गुप्त रखना चाहिए।

2.11 सारांश -

संगठनों की सफलता उसके कर्मचारियों द्वारा किये गये कार्यों पर निर्भर करती है। इसके द्वारा कर्मचारी के निष्पादित कार्य की गुणवत्ता को परखा जाता है तथा संगठनों के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को सफलतापूर्वक एवं प्रभावपूर्ण ढंग से प्राप्त किया जाता है।

निष्पादन मूल्यांकन के द्वारा कर्मचारी प्रशिक्षण की नवीन एवं परिवर्तित आवश्यकतों का पता लगाकर उनकी पदोन्नति एवं स्थानान्तरण के आधार सुनिश्चित किये जाते हैं। निष्पादन मूल्यांकन के अनेक प्रकार होते हैं जिनमें आकस्मिक,अनियोजित तथा विश्रृंखला, पारस्परिक तथा सुनियोजित एवं व्यवहार प्रणाली प्रमुख है। निष्पादन मूल्यांकन कार्यक्रम के चरण के अन्तर्गत कार्य एवं उत्तरदायित्वों का विश्लेषण कर कार्य निष्पादन के प्रमाप निर्धारित करना तथा कार्य निष्पादन का पर्यवेक्षण आदि सम्मिलित होता है।

कर्मचारियों के निष्पादन के मूल्यांकन करने की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं। कर्मचारियों की निष्पादन योग्यता को आंकने में विभिन्न प्रचलित विधियों का प्रयोग कार्य की प्रकृति एवं अन्य आधारों पर किया जाता है। इसके अन्तर्गत जहाँ कुछ प्राचीन विधियाँ पूर्वाग्रहों से ग्रस्त पायी जाती हैं वहीं कुछ आधुनिक विधियाँ अधिक न्याय संगत एवं तर्क पर आधारित है। इसके साथ ही कर्मचारी की क्षमता का आंकलन भी संगठनों के द्वारा किया जाता है। इसका लक्ष्य कर्मचारियों की योग्यता एवं आकांक्षा को सगठन की आवश्यकता के अनुरूप बनाना है।

2.12 बोध प्रश्न -

प्र01. निष्पादन मूल्यांकन से आप क्या समझते हैं? निष्पादन मूल्यांकन के प्रकारों का वर्णन करें।

प्र02. निष्पादन मूल्यांकन कार्यक्रम के प्रमुख चरणों को बताये तथा इसके गुण दोषों का वर्णन करें।

प्र04. निष्पादन मूल्यांकन के प्रमुख उद्देश्यों का वर्णन करें तथा किसी एक विधि का वर्णन करें।

2.13 सन्दर्भ ग्रन्थ -

1. योडर, डेल - ''पर्सनेल मैनेजमेन्ट एण्ड इन्डस्ट्रियल रिलेशन्स'', प्रिन्टिस हाल, नई दिल्ली-1980

2. मैक्ग्रेमर डगलस - ''द ह्यूमन साइड ऑफ इन्टरप्राइज'', मैग्राहिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क 1964

4. फिलप्पो एडविन बी0 ''पर्सनल मैनेजमेन्ट, मेक्ग्राहिल, टोक्यो, 1981

इकाई 3 : कार्य मूल्यांकन

इकाई की रूपरेखा

3.1 परिचय

3.2 उद्देश्य

3.3 कार्य मूल्यांकन का अर्थ

3.4 कार्य मूल्यांकन का उद्देश्य

3.5 कार्य मूल्यांकन के सिद्धान्त

3.6 कार्य मूल्यांकन प्रक्रिया

3.7 कार्य मूल्यांकन योजना के कारण

3.7.1 कार्य विवरण तैयार करना

3.7.2 कार्य मूल्यांकन योजना का चयन एवं उसे तैयार करना

3.7.3 कार्यों का वर्गीकरण एवं मूल्यांकन

3.7.4 कार्य मूल्यांकन कार्यक्रम को क्रियान्वित करना

3.7.5 कार्यक्रम का साधारण

3.8 कार्य मूल्यांकन के लाभ

3.9 कार्य मूल्यांकन के दोष

3.10 सारांश

3.11 बोध प्रश्न

3.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.1 परिचय

संगठन के अन्तर्गत कार्यरत कर्मचारी अपनी क्षमता एवं कौशल के अनुसार कार्यों का निपटारा करते हैं। कर्मचारी क्षमता एवं कौशल में दूसरे कर्मचारी से भिन्न होते हैं तथा उनके द्वारा किया गया कार्य भिन्न-भिन्न होता है। संगठनों में जहाँ कुछ कर्मचारी चुनौतीपूर्ण कार्य करते हैं वहीं कुछ ऐसा नहीं करते हैं। अतः प्रत्येक कर्मचारी निष्पादित कार्य का मूल्यांकन आवश्यक होता है। इसके द्वारा एक न्यायपूर्ण एवं पक्षपात रहित मजदूरी निर्धारण सुनिश्चित की जा सकती है। इसके अतिरिक्त संगठन में कार्यरत सभी व्यक्तियों को सही कार्य पर लगाया जा सकता है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सक्षम होंगे -

1. कार्य मूल्यांकन कें अर्थ एवं सिद्धान्त जानने में।
2. कार्य मूल्यांकन प्रक्रिया को जानने में।
4. कार्य मूल्याकंन योजना के विभिन्न चरण जानने में।
4. कार्य मूल्यांकन की विधियाँ जानने में।
5. कार्य मूल्यांकन के गुण एवं दोष जानने में।

3.3 कार्य मूल्यांकन

कार्य मूल्यांकन या कार्य श्रेणीयन एक कार्य के किसी संस्था के अन्दर या उससे बाहर अन्य कार्यों के सम्बन्ध में उसके मूल्यांकन की प्रक्रिया है।

डेल योडर के अनुसार ''कार्य मूल्यांकन एक पद्धति है जो एक संगठन के भीतर मिलते-जुलते संगठनों के बीच कार्यों के तुलनात्मक मूल्य मापने का आधार प्रदान करती है। यह आवश्यक रूप में कार्य श्रेणीयन पद्धति है, जो कर्मचारियों के श्रेणीयन से भिन्न हैं।

कार्य मूल्यांकन अपने सरल रूप में विभिन्न कार्यों का श्रेणीयन है जिसमें पैमाने के एक सिरे पर उन कार्यों को रखा जाता है जिसमे कुल आवश्यकताओं का योग अधिकतम होता है और दूसरे सिरे पर उन कार्यों को रखा जाता है जिनकी आवश्यकताओं का योग न्यूनतम है तथा अन्य कार्यों को उनके सापेक्षिक आवश्यकताओं के योग के अनुसार क्रम से व्यवस्थित कर इन दो सीमाओं के बीच में रखा जाता है। कार्य मूल्यांकन सिर्फ कार्य की आवश्यकताओं से सम्बन्ध रखता है। इसका सम्बन्ध इस बात से नहीं है कि एक व्यक्ति में उन आवश्यकताओं की पूर्ति के गुण किस मात्रा में है। एक संगठन में विभिन्न कार्यों की तुलनात्मक आवश्यकताओं का पता लगाने के लिए कार्य मूल्यांकन किया जाता है।

3.4 कार्य मूल्यांकन के उद्देश्य

1. भुगतान में असमानताओं का निवारण।
2. मजदूरी सम्बन्धी विवादों का निराकरण।

4. व्यक्तिगत पक्षपात का निवारण।

4. सुनिश्चित एवं न्यायसंगत वेतन एवं मजदूरी ढाँचे की स्थापना।

5. कार्य प्रभावीकरण।

6. कार्य निवारण की संरचना।

3.5 कार्य मूल्यांकन के सिद्धान्त

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सक्षम होंगे -

1. मूल्यांकन कार्य का होना चाहिए व्यक्ति का नहीं।

2. घटकों की संख्या कम, परिभाषा स्पष्ट एवं चयन वैज्ञानिक होना चाहिए।

4. कार्य मूल्यांकन पद्धति में उचित प्रतिनिधित्व एवं परामर्श।

4. कार्य वर्ग सीमित हो।

5. कार्य मूल्यांकन के लिए उचित व्यक्तियों की नियुक्ति।

6. कार्य मूल्यांकन पर पुनर्विचार।

3.6 कार्य मूल्यांकन प्रक्रिया

कार्य मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा कार्य मूल्यांकन पद्धति का क्रियान्वयन किया जाता है। कोई भी योजना समझ-बूझ के साथ एवं सर्वमान्य होने पर लागू की जानी चाहिए अन्यथा मूल्यांकन पद्धति की सफलता संदिग्ध रहती है। प्रत्येक निरीक्षक के लिए आवश्यक होता है कि वह स्वयं योजना के महत्व को समझे तथा अपने अधीनस्थों को भी योजना के महत्व के बारे में समझायें।

प्रबन्धकों को चाहिए कि योजना के प्रत्येक भाग की पूर्ण जानकारी प्रचार एवं प्रसार की सुविधायें सम्बन्धित कर्मचारियों को दे। नीतियों, उद्देश्यों तथा कार्य प्रणालियों के पूर्ण विश्लेषण के लिए आवश्यक है कि पर्यवेक्षक योजना को लागू किये जाने के पूर्व प्रशिक्षित किये जायें। कार्य की प्रकृति के अनुसार कर्मचारियों के अलग-अलग वेतनमान निर्धारित किये जाते हैं। इस प्रकार मशीन पर कार्य करने वाले श्रमिक का कार्य कार्यालय लिपिक, विक्रमकर्ता आदि के कार्य समान रूप से तुलनात्मक नहीं है, दक्ष कर्मचारियों की प्राप्त के लिए आवश्यक है कि वेतनमान उस क्षेत्र में प्रचलित वेतनमानों के समकक्ष हो या उससे अधिक होने चाहिए।

नयी योजनायें समुदाय के लिए शंका का कारण बनती है। अतः इस समस्या के निदान के लिए योजना तथा प्रशासन पद्धति इतनी स्पष्ट एवं निश्चित चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति उसे समझ सके। योजना के क्रियान्वयन हेतु सभी वर्ग के कर्मचारियों का सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिए।

3.7 कार्य मूल्यांकन योजना के चरण

कार्य मूल्यांकन योजना को प्रारम्भ तथा विकसित करने के लिए आग्रांकित पाँच चरण महत्वूपर्ण है-

1. कार्य विवरण तैयार करना।
2. कार्य मूल्यांकन योजना का चयन एवं उसे तैयार करना।
4. कार्यों का वर्गीकरण तथा मूल्यांकन।
4. कार्य मूल्यांकन कार्यक्रम को क्रियान्वित करना।
5. कार्यक्रम का संधारण।

3.7.1 कार्य विवरण तैयार करना -

कार्य विवरण अर्थात् कार्य की पूर्ण विस्तार से जानकारी प्राप्त होना, कार्य मूल्यांकन कार्यक्रम की सफलता के लिए आवश्यक है। यह मूल्यांकनकर्ता को कार्य के बारे में सम्पूर्ण जानकारी उपलब्ध कराता है। भली प्रकार से बताया गया कार्य विवरण भर्ती, स्थानान्तरण, पदोन्नति तथा कार्य विधि सुधार एवं उत्पादन लागत, अनुमान करने में किया जा सकता है। कार्य विवरण अनुभवी एवं दक्ष व्यक्ति द्वारा किया जाना चाहिए। इस दृष्टि से पर्यवेक्षकों की सेवाओं का उपयोग किया जाना चाहिए कार्य विवरण सही ढंग से तैयार करने के लिए निम्न प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना चाहिए-

1. मूल्यांकन योग्य कार्यों की सूची।
2. कार्यक्रम की पूर्व घोषणा।
4. पर्यवेक्षक के साथ साक्षात्कार।
4. कर्मचारी के साथ साक्षात्कार।
5. कार्य-विवरण का पुनरावलोकन।

3.7.2 कार्य मूल्यांकन योजना का चयन एवं उसे तैयार करना -

इस योजना के चयन करने में प्रथम चरण यह निर्णय करता है कि कार्य मूल्यांकन के लिए संख्यात्मक अथवा गैर संख्यात्मक विधियों में से किनका प्रयोग किया जाए। प्रत्येक प्रकार की योजना के लिए दो विधियाँ उपलब्ध हैं।

कार्य मूल्यांकन योजनाएं

गैर संख्यात्मक

1. क्रम निर्धारण विधि
2. श्रेणीकरण विधि

संख्यात्मक

1. घटक तुलनात्मक विधि
2. अंक तुलना विधि

A. गैर संख्यात्मक मूल्यांकन विधियाँ -

इसके अन्तर्गत इन विधियों को सम्मिलित किया जाता है-

1. क्रम निर्धारण विधि
2. श्रेणीकरण प्रणाली

1. क्रम निर्धारण विधि -

कार्य से सम्बन्धित समस्त सूचनाओं के आधार पर प्रत्येक कार्य की श्रेणी इस विधि से अन्तर्गत निर्धारित कर दी जाती है। विभिन्न कार्यों की श्रेणियाँ निर्धारित करने के उपरान्त उनको विभिन्न समूहों में विभक्त कर दिया जाता है। समान श्रेणी वाले समस्त कार्यों को एक ही श्रेणी में रखा जाता है। इस विधि में 5 चरणों का प्रयोग किया जाता है। इस विधि 5 चरणों का प्रयोग किया जाता है।

1. कार्य विवरण तैयार करना तथा उसका क्रम कार्ड पर अंकित करना।
2. मुख्य कार्यों तथा मूल्यांकनकर्ताओं का चयन करना। सफल मूल्यांकन के लिए 10 से 20 तक कार्य चयनित किये जाने चाहिए।
4. मुख्य कार्यों को उनकी विशिष्टता के आधार पर क्रमबद्ध करना तथा उनकी सम्पूर्ण सूची तैयार करना।
4. समस्त कार्यों का क्रम निर्धारित करना-इस चरण के अन्तर्गत सभी कार्यों को

उनकी कठिनाई, सुविधा का महत्व के अनुसार क्रमबद्ध किया जाता है। मुख्य कार्यों को प्राथमिकता दी जाती है कम महत्वपूर्ण कार्यों को बाद का क्रम दिया जाता है।

5. क्रम निर्धारण के आधार पर कार्य का वर्गीकरण करना - इसके अन्तर्गत क्रमबद्ध कार्यों को वगीकृत किया जाता है। सामान्यतः 8 या 12 वर्ग बनाये जाते हैं। एक वर्ग में सम्मिलित किये जाने वाले श्रमिकों को समान मजदूरी प्रदान की जाती है।

इस पद्धति में कुछ खामियाँ हैं। इसमें स्थान या क्रम निर्धारित करने वाले अधिकांश के पक्षपात पर कोई नियन्त्रण नहीं होता है। अतः क्रम निर्धारण श्रेणियाँ की अनुपयक्तता के बारे में अधिक विश्वास नहीं किया जा सकता है। प्रत्येक ग्रेड का कम अथवा अधिक होना कार्य के कम अथवा अधिक होने से सम्बन्धित नहीं होता है। सरलता जहाँ इस प्रणाली का मुख्य कारण है वही एक दोष यह भी है कि कोई भी व्यक्ति अपने प्राप्त स्तर के प्रति प्रश्न पूछ सकता है कि उसके इस क्रम का आधार क्या है?

2. श्रेणीकरण प्रणाली

इस प्रणली में भी 5 चरण सम्मिलित किये जाते हैं -

1. कार्य विवरण तैयार करना।

2. वर्ग विवरण तैयार करना। इसके अन्तर्गत प्रत्येक वर्ग को परिभाषित किया जाता है। जिसके आधार पर कार्य के विभिन्न वर्ग तथा स्तर निर्धारित किये जाते हैं। एक बार वर्ग निर्धारित किये जाने पर गैर-पर्यवेक्षकीय उत्तरदायित्व तथा पर्यवेक्षकीय उत्तरदायित्व निर्धारित किया जाता है। सामान्यतः 8 से 12 वर्ग निर्धारित किये जाते हैं।

4. मुख्य कार्य तथा वर्गीकरणकर्ताओं का चयन :- कार्य वर्गीकरण करने वाला व्यक्ति सभी प्रकार के कार्यों से परिचित होना चाहिए। सामान्यतः 10 से 20 मुख्य कार्यों को वर्गीकृत कार्यों को वर्गीकृत किया जाता है जिसमें सभी वर्ग के कार्यों को सम्मिलित किया जाता है।

4. मुख्य कार्यों का वर्गीकरण :- इसके अन्तर्गत उपयुक्त वर्ग स्तर के आधार पर मुख्य कार्यों का वर्गीकरण किया जाता है। सम्बन्धों को वर्ग परिभाषा के अनुसार स्थापित किया जाना आवश्यक है।

5. सभी प्रकार के कार्यों का वर्गीकरण करना एक ही वर्ग में सम्मिलित सभी कार्यों का समान मजदूरी की दर प्रदान की जानी चाहिए।

कार्य श्रेणीयन यद्यपि सरल प्रतीत होता है, परन्तु सामान्य व्यक्ति यह कार्य नहीं कर सकता। श्रेणी निश्चित करने वाले के लिए यह आवश्यक है कि उसे कार्य का पर्याप्त ज्ञान हो। कार्य श्रेणीयन योजना निम्न बातों पर आधारित है--

1. शिक्षा अथवा कार्य का ज्ञान।

2. अनुभव

4. स्वतः प्रेरणा तथा कल्याण शक्ति

4. शारीरिक शक्ति

5. मानसिक योग्यता

6. कार्य प्रणाली एवं कार्य प्रक्रिया के प्रति उत्तरदायित्व।

7. उत्पाद सामग्री के प्रति उत्तरदायित्व

8. अन्य व्यक्तियों की सुरक्षा।

9. अन्य व्यक्तियों के कार्य के प्रति उत्तरदायित्व

10. कार्य की दशाएँ

11. जोखिम जो टाली न जा सके।

B. संख्यात्मक मूल्यांकन विधियाँ -

इसके अन्तर्गत इन विधियों को सम्मिलित किया जाता है-

1. घटक तुलना विधि

2. अंक तुलना विधि

1. घटक तुलना विधि

इस विधि का प्रयोग सर्वप्रथम सन् 1926 में यूजेन जे0 वेगे ने किया था। इस विधि में प्रत्येक घटक को अंक देने के बजाय मौद्रिक मूल्य प्रदान किया जाता है इस प्रणाली में 10 या 15 कार्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस विधि में 5 या 7 घटकों का चयन किया जाता है। सामान्यतः में घटक होते हैं- कौशल, पर्यवेक्षकीय, उत्तरदायित्व,

अनुभव प्राप्त पर्यवेक्षण, मानसिक प्रयास, शिक्षा, भौतिक प्रयास, उत्तरदायित्व-भौतिक अथवा औजार सम्बन्धी, कार्य की दशाएँ, सुरक्षा। इस विधि में निम्न चरण सम्मिलित किये जाते हैं-

1. कार्य विवरण तैयार करना।
2. प्रयोज्य घटकों का चयन करना।
4. मूल्यांकन कर्ताओं तथा प्रमुख कार्यों का चयन। इसमें 15 या 20 कार्यों का चयन किया जाता है जिनकी मजदूरी की दरें भिन्न-भिन्न होती है।
4. प्रत्येक कार्य को उसके महत्व के आधार पर मूल्यांकित करना। इनके दो या अधिक घटक समान मूल्य वाले हो सकते हैं
5. मुख्य कार्यों को विभिन्न विशेषताओं के आधार पर क्रमबद्ध करना।
6. प्रत्येक मुख्य कार्य का मुद्रा के रूप में मूल्य स्थापित करना। प्रत्येक आधार पर न्यूनतम तथा अधिकतम मूल्य बाले कार्यों का अन्तर आवश्यक है।
7. समस्त कार्यों की दर निर्धारित करना। यह कार्य अत्यन्त कठिन है क्योंकि प्रत्येक कार्य को उसके सम्बद्ध कार्य से तुलना योग्य बनाना पड़ता है तथा उसी के अनुसार अधिक महत्वपूर्ण एवं जोखिम भरे कार्य को अधिक दर से तथा सरल एवं कम जोखिम कार्य को कम दर से मूल्यांकित किया जाता है।

अंक तुलना विधि

इस विधि के अन्तर्गत प्रत्येक कार्य के लिए कुछ अंक निर्धारित किये जा सकते हैं जो चातुर्य, उत्तरदायित्व, प्रयास तथा कार्य के दशाओं के आधार पर दिये जाते हैं। मुख्य अंक निर्धारण के घटक अनुभव, शिक्षा तथा उत्तरदायित्व आदि होते हैं। सुरक्षा एवं कार्य की दशाएं भी इसी श्रेणी में सम्मिलित की जाती है। प्रत्येक स्तर पर अंक निर्धारित करने के लिए कार्य का वर्गीकरण व प्रत्येक कार्य की परिभाषा निश्चित की जाती है तथा प्रत्येक कार्य को एक दूसरे से तुलनात्मक ढंग से देखा जाता है। अंक तुलना विधि में छः मुख्य माने जाते हैं --

1. कार्य विवरण तैयार करना।
2. समस्त कार्यों से सम्बन्धित घटकों का चयन करना।

4. प्रत्येक घटक का भार निश्चित करना जिससे उसके अनुसार अंक प्रदान किये जा सके।

4. प्रत्येक घटक को परिभाषित करना तथा एक सामान्य परिभाषा निर्धारित करना जिससे साधनों का मूल्यांकन उचित ढंग से किया जा सके।

5. प्रत्येक घटक को विभिन्न स्तरों के अनुसार बाँटना तथा प्रत्येक स्तर के लिए परिभाषा तैयार करना।

6. एक साधन में पाये जाने वाले विभिन्न तत्वों का सापेक्ष मूल्य अंकित करना जिससे उन्हें अंकों के रूप में स्पष्ट किया जा सके।

3.7.3 कार्यों का वर्गीकरण तथा मूल्यांकन -

कार्यों का मूल्यांकन एवं वर्गीकरण करने के लिए एक समिति गठित की जानी चाहिए जिसमें चार से छः सदस्य हो सकते हैं। इस समिति में एक अध्यक्ष, दो स्थायी सदस्य (एक प्रबन्ध से तथा एक श्रम संघ से) एवं दो अस्थायी सदस्य जो मूल्यांकित किये जाने वाले विभाग से सम्बन्धित हो सकते हैं। सामान्यतः अस्थायी सदस्य, फोरमैन तथा विभागीय कर्मचारी हो सकते हैं। कार्य मूल्यांकन समिति सर्वप्रथम मूल्यांकन पुस्तिका के प्रति अपने विचार निश्चित करती है। इसके पश्चात् मूल्यांकन कार्य प्रारम्भ होता है कि किन कार्यों का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। प्रत्येक कार्य को घटक के अनुसार मूल्यांकित किया जाता है। मूल्यांकित कार्यों का आलेख रखने के लिए लिपिक रखा जाता है। सभी सदस्यों की सहमति पर कार्य मूल्यांकन समाप्त होता है।

समस्त मूल्यांकित बिन्दुओं को बिन्दुरेखीय चित्र पर अंकित किया जाता है। सामान्यतः यह कार्य विभाग, अनुभाग अथवा संगठन के आधार पर बांटा जाता है। मूल्यांकन के उपरान्त मजदूरी निर्धारण का कार्य महत्वपूर्ण है। मजदूरी की विभिन्न दरें मूल्यांकन के आधार पर निश्चित की जाती है। विभिन्न कार्यों की संख्या 9 से 14 तक होती है। बड़े उद्योगों में इससे भी अधिक वर्ग बनाये जाते हैं।

3.7.4 कार्य मूल्यांकन कार्यक्रम को क्रियान्वित करना -

कार्य मूल्यांकन कार्यक्रम तभी लागू किया जा सकता है जब श्रमिक एवं अन्य सभी सम्बन्धित व्यक्ति उससे सन्तुष्ट हो। सामान्यतः उन्हें कार्यक्रम के बारे में पूर्व सूचना देनी चाहिए तथा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि --

1. कार्य मूल्यांकन से मजदूरी सम्बन्धी सभी समस्याएँ हल नहीं होती हैं।

2. कार्य मूल्यांकन कार्यक्रम एक प्रयोग ही नहीं है, अपितु कार्य समझने की एक कला है

4. किसी भी कर्मचारी को व्यक्तिगत रूप से किसी प्रकार की हानि इस कार्यक्रम से नहीं होनी चाहिए।

4. पर्यवेक्षकों तथा प्रबन्धकों के अधिकारों का हनन कार्यक्रम द्वारा नहीं होना चाहिए।

5. क्या कार्य मूल्यांकन समिति वास्तव में मूल्यांकन कार्य करने के लिए सक्षम है।

श्रमिकों को कार्यक्रम से अवगत करायने के लिए मैगजीन, लेख, समाचार पत्र, नोटिस बोर्ड आदि प्रसार के माध्यमों का सहारा लिया जाता है। मूल्यांकन कार्यक्रम लागू करते समय पर्यवेक्षकों तथा कर्मचारियों के पास कार्य वर्गीकरण उपलब्ध होना चाहिए।

कार्यक्रम का संधारण - मूल्यांकन कार्यक्रम का समय-समय पर पुनरावलोकन तथा परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप उसमें सुधार अत्यन्त आवश्यक है। कार्यों एवं कार्य विवरणों में प्रायः परिवर्तन होते रहते हैं। अधिकांश मूल्यांकन कार्यक्रमों की असफलता का कारण यह है कि प्रबन्धक बदलते हुए परिवेशों में इसका अनुसरण नहीं कर पाते। एक अच्छे कार्य मूल्यांकन संधारण कार्यक्रम के लिए निम्न बातें होनी चाहिए।

1. उच्च प्रबन्धक अथवा मुख्य औद्योगिक इंजीनियर की अध्यक्षता वाली एक स्थायी कार्य मूल्यांकन समिति होनी चाहिए।

2. सामान्यतः प्रति वर्ष अथवा प्रति दूसरे वर्ष कार्यक्रम का सामयिक पुनरावलोकन होना चाहिए।

4. संयंत्र प्रबन्धक की सिफारिश पर पुराने कार्यों तथा नव सृजित कार्यों का मूल्यांकन करने के लिए मूल्यांकन स्थायी समिति की एक त्रैमासिक बैठक होनी चाहिए। कम्पनी की यह नीति होनी चाहिए कि मूल्यांकन के बिना किसी प्रकार के कार्य के लिए कोई मजदूरी की दर निर्धारित न की जाए।

3.8 कार्य मूल्यांकन के लाभ

कार्य मूल्यांकन को लाभों के अन्तर्राष्ट्रीय श्रमसंघ द्वारा इस प्रकार व्यक्त किया गया है-

1. कार्य मूल्यांकन, कार्यों का क्रम निर्धारण करने तथा उनका सापेक्ष रूप से अध्ययन करने की एक तर्कसंगत विधि है जिससे मजदूरी की असमानताओं तथा विसंगतियों को दूर कने मे सहायता मिलती है।

2., नये कार्यों की दशा में, वर्तमान ढांचे के अनुसार मजदूरी निर्धारण में सहायता मिलती है।

4. मजदूरी से सम्बन्धित विवाद घट जाते हैं।

4. अच्छे श्रम सम्बन्धों का विकास होता है।

5. सामूहिक सौदेबाजी से उत्पन्न कठिनाइयों के निराकरण का आधार प्राप्त होता है एवं इससे प्रबन्धक अधिक पुष्ट तर्क देने में समर्थ होते हैं

6. वेतन एवं मजदूरी प्रशासन सुगम होता है तथा समान दरों को लागू करना सरल हो जाता है।

7. एकत्रित सूचना व्यक्ति के चयन, स्थानान्तरण, पदोन्नति तथा तुलनात्मक अध्ययन के लिए उपयोगी होती है।

8. श्रम का उचित प्रयोग किया जा सकता है, सही व्यक्ति को सही कार्य पर लगाया जा सकता है।

3.9 कार्य मूल्यांकन के दोष

कार्य मूल्यांकन व्यवहार में एक कठिन एवं विषम समस्या है। यह समस्या न केवल उन घटकों से प्रभावित होती है जिन्हें हम कार्य सम्पन्नता या कम्पनी के लिए महत्वपूर्ण समझते हैं बल्कि अनेकों ऐसे घटकों से प्रभावित होती है कि जो सामाजिक मानवीय एवं राजनैतिक स्वाभाव के होते है। व्यवहार में कार्य का सही मूल्यांकन हुआ है, इसकी सत्यतता पर विश्वास बहुत मुश्किल होता है। कार्य मूल्यांकन पद्धति की आलोचना करते हुए वाडटल्स ने निम्नलिखित बातों पर प्रकाश डाला है-

1. कार्य मूल्यांकन शुद्धता का झूठा भरोसा देता है बहुत सी असंगत बातें खोज द्वारा दूर करने के लिए फिर भी रह जाती है।

2. घटकों की संख्या प्रायः अधिक होती है।

4. घटकों को प्रायः सही रूप में परिभाषित नहीं किया जाता।

4. कार्य मूल्यांकन विधि के सम्बन्ध में प्रायः बहुत विवाद होता है और परिणामों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाए।

5. परिणामों पर मूल्यांकन की मानसिक अवस्था का भी प्रभाव पड़ता है अर्थात् परिणाम पूर्णतः वस्तुनिष्ठ नहीं होते।

6. जो श्रमिक यह अनुभव करते हैं कि कार्य मूल्यांकन के आधार पर उन्हें गुण एवं कार्य की कठिनाइयाँ आदि के अनुसार भुगतान होगा यह प्रसन्न रहते हैं, किन्तु अधिकतर श्रमिक जानकारी के अभाव में या स्वभावतः असन्तुष्ट नजर आते हैं।

3.10 सारांश

कार्य मूल्यांकन एक कार्य का किसी संस्था के अन्दर या उससे बाहर अन्य कार्यों के संबंध में उसके मूल्यांकन की प्रक्रिया है। कार्य मूल्यांकन का उद्देश्य भुगतान में असमानताओं का निवारण, मजदूरी सम्बन्धी विवादों का निराकरण, व्यक्तिगत पक्षतात का निवारण, सुनिश्चित एवं न्यायसंगत वेतन एवं मजदूरी ढाँचे की स्थापना, कार्य प्रभावीकरण तथा कार्य विवरण की संरचना होता है। कार्य मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा कार्य मूल्यांकन पद्धति का क्रियान्वयन किया जाता है। कार्य मूल्यांकन योजना अनेक चरणों में विकसित की जाती है। इसके अन्तर्गत कार्य विवरण, कार्य मूल्यांकन योजना का चयन कार्यों का वर्गीकरण तथा मूल्यांकन तथा मूल्यांकन, कार्य मूल्यांकन कार्यक्रम को क्रियान्वित करना तथा कार्यक्रम का संधारण होते हैं। कार्य मूल्यांकन योजनाएं मुख्य दो प्रकार-सख्यात्मक तथा गैर संख्यात्मक होती है। गैर संख्यात्मक विधियों के अन्तर्गत क्रम निर्धारण विधि तथा श्रेणीकरण प्रणाली एवं संख्यात्मक मूल्यांकन विधि के अन्तर्गत घटक तुलनाविधि एवं अंक तुलनाविधि को सम्मिलित किया जाता है। कार्यों का वर्गीकरण तथा मूल्यांकन एक समिति द्वारा की जाती है जो सभी सदस्यों की सहमति द्वारा होता है। कार्य मूल्यांकन कार्यक्रम तभी लागू किया जा सकता है जब श्रमिक एवं अन्य सम्बन्धित व्यक्ति उससे संतुष्ट हो। कार्य मूल्यांकन कार्यक्रम का समय-समय पर पुनरावलोकन तथा परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप उसमें सुधार अत्यन्त आवश्यक होता है। कार्य मूल्यांकन के अनेक लाभ जहाँ एक तरफ है, तो वहीं दूसरी तरफ अनेक दोष भी पाये जाते हैं।

3.11 बोध प्रश्न

1. कार्य मूल्यांकन से आप क्या समझते हैं? इसके गुण एवं दोषों का उल्लेख करें?
2. कार्य मूल्यांकन योजना के विभिन्न चरणों के संक्षेप में बताइये?
4. गैर संख्यात्मक विधियों को संक्षेप में बताइये?

3.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. योडर, डेल-''पर्सनल मैनेजमेन्ट इन्टस्ट्रियल रिलेशन्स'', प्रिन्टिक हाल, नई दिल्ली - 1980।
2. मैक्ग्रेसर डगलस- ''द ह्ययूमन साइड ऑफ इन्टरप्राइस'', मैग्राहिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क, 1964।
4. फिलप्पों एडविन बी0, ''पर्सनेल मैनेजमेन्ट, मेक्ग्राहिल, टोक्यों, 1981।

इकाई 4 : मजदूरी निर्धारण

इकाई की रूपरेखा

4.1 परिचय

4.2 उद्देश्य

4.3 मजदूरी सिद्धान्त

4.3.1 जीविका सिद्धान्त

4.3.2 मजदूरी निधि सिद्धान्त

4.3.3 आधिक्य मूल्य सिद्धान्त

4.3.4 क्रमिक घटोत्तरी का सिद्धान्त

4.3.5 सौदेकारी सिद्धान्त

4.3.6 व्यावहारिक सिद्धान्त

4.4 सीमान्त लागत सिद्धान्त

4.5 मजदूरी भिन्नता

4.6 मजदूरी निर्धारण

4.7 सामूहिक सौदेकारी और न्यायिकरण

4.8 मजदूरी बोर्ड

4.9 भुगतान आयोग

4.10 मजदूरी भुगतान की पद्धतियाँ

4.10.1 समयानुसार भुगतान पद्धति

4.10.2 कार्यानुसार भुगतान पद्धति

4.11 सारांश

4.12 बोध प्रश्न

4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.1 परिचय

मजदूरी नियोक्ता द्वारा अपने कर्मचारियों को किया गया भुगतान है जो वह उनकी सेवाओं के बदले देता है। संगठन के काम करने वाले कर्मचारियों को समया, ऊर्जा एवं ज्ञान के बदले में एक प्रकार का मुआवजा मजदूरी के रूप में प्राप्त होता है।

मजदूरी निर्धारण को अत्यन्त सावधानी से काम करना चाहिए क्योंकि मजदूरी निर्धारण जहां श्रमिकों का मनोबल बढ़ाती है वहीं मजदूरी निर्धारण की थोड़ी सी गलती कर्मचारियों में असंतोष पैदा करती है जो संगठन के लिए अच्छा नहीं होता है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप समझ सकेंगे-

1. मजदूरी का अर्थ जानने।
2. मजदूरी के सिद्धान्तों का परिचय प्राप्त करने में।
3. मजदूरी भिन्नता एवं मजदूरी निर्धारण की संस्थाओं को जानने में।
4. मजदूरी भुगतान की पद्धतियों को जानने में।

मजदूरी

मजदूरी एक आर्थिक मुआवजा है जो नियोक्ता द्वारा अपने मजदूरों को कुछ अनुबन्धों के साथ उनकी सेवाओं के बदले में दी जाती है। अतः मजदूरी में परिवार भत्ता, आराम भत्ता, वित्तीय सहायता एवं अन्य लाभ सम्मिलित होते हैं लेकिन सूक्ष्म अर्थ में मजदूरी वह मूल्य है जो उत्पादन प्रक्रिया में श्रमिक की सेवाओं के बदले में प्रदान किया जाता है और इसमें केवल निष्पादन मजदूरी सम्मिलित होती है।

4.3 मजदूरी सिद्धान्त

भिन्न-भिन्न उद्योगों तथा देशों में मजदूरी भुगतान की अलग-अलग विधियाँ पायी जाती है। मजदूरी का भुगतान मुख्यतः समय, परिणाम या कार्य के आधार पर निर्धारित किया जाता है। मजदूरी का निर्धारण मुख्यतः वैयक्तिक सौदेकारी, सामूहिक सौदेकारी या लोगों अथवा राज्य द्वारा निर्धारित की जाती है। मजदूरी का निर्धारण कैसे किया जाता है यह विषय मजदूरी सिद्धान्तों द्वारा सम्पन्न होता है। इन सिद्धान्तों के प्रमुख तत्व निम्न हैं।

4.4 जीविका सिद्धान्त

यह मजदूरी का ''लौह नियम'' कहा जाता है। इसका प्रतिपादन डेविड रिकार्डों ने किया था। इसके अनुसार श्रमिकों को उतना भुगतान किया जाता है कि वे अपने जीवन का निर्वाह कर सके तथा किसी मुश्किल का सामना न करना पड़े। यह सिद्धान्त इस

अवधारणा पर आधारित है कि यदि श्रमिकों को जीवन निर्वाह स्तर से अधिक भुगतान किया जायेगा तो उनकी संख्या बढ़ जायेगी तथा वे अधिक की माँग करेंगे जिससे मजदूरी दर घट जायेगी। यदि मजदूरी जीविका दर से कम प्रदान की जायेगी तो श्रमिकों की संख्या घट जायेगी, क्योंकि अधिकांश की मृत्यु, भूख, कुपोषण, बीमारियों एवं ठन्ड से हो जायेगी तथा अन्य कई विवाह नहीं कर सकेंगे जिसके परिणाम स्वरूप मजदूरी की दर बढ़ जायेगी।

4.5 मजदूरी निधि सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के जनक एडम स्थिम थे। उनकी अवधारणा थी कि मजदूरी सम्पत्तियों के एक पूर्व निर्धारित निधि से प्रदान की जाती है जो सम्पत्तियों के आधिक्य से बनती है। यह बचत के कारण बनती है। इस निधि का उपयोग मजदूरों को काम पर लगाने में किया जाता है। यदि निधि बड़ी होगी तो मजदूरी की दर ऊँची तथा कम होने पर मजदूरी जीविका स्तर से कम होगी। मजदूर की माँग तथा मजदूरी का भुगतान निधि के आकार पर निर्भर करेगा।

4.6 आधिक्य मूल्य सिद्धान्त

इस सिद्धान्त को कार्लमार्क्स ने प्रतिपादित किया इस सिद्धान्त के अनुसार मजदूर एक वाणिज्य की वस्तु है जिसे जीविका मूल्य भुगतान करके खरीदा जा सकता है। किसी वस्तु के मूल्य का निर्धारण इसके उत्पादन में लिये गये समय से होता है। मजदूरों को खर्च किये गये समय के अनुपात में भुगतान नहीं किया गया है बल्कि कुछ कम किया जाता है। यह आधिक्य ही अन्य खर्चों के भुगतान में इस्तेमाल किया जाता है।

4.7 क्रमिक घटोत्तरी का सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के जनक फैंसिस ए0 वाकर थे। उनके अनुसार किसी उत्पादन अथवा व्यवसायिक क्रिया कलाप में चार तत्व मुख्य है-भूमि, मजदूर, पूँजी तथा उद्यमशीलता। मजदूरी वही भाग होता है जो उत्पादन के अन्य तत्वों के मूल्य के भुगतान के पश्चात् शेष बचता है।

4.8 सौदेकारी सिद्धान्त

जान डेविडसन ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस सिद्धान्त में मजदूरी का निर्धारण मजदूरों अथवा श्रम संघों की नियोक्ताओं से सौदेकारी क्षमता पर निर्भर करती

है। जब एक श्रम संघ मूल मजदूरी, अनुषंगी लाभ, कार्य भिन्नता और वैयक्तिकता विभाग को सम्मिलित करती है तो संगठन एवं श्रमिकों की सम्बन्धित शक्ति का निर्धारण करती है।

4.9 व्यावहारिक सिद्धान्त

अनेक व्यवहारवादी वैज्ञानिकों जो कि औद्योगिक मनोवैज्ञानिक और समाजशास्त्रीय जैसे-मार्स, साइमन, राबर्ट डुविन और इटिओट जैक्स ने मजदूरी एवं वेतन पर अपने विचार दिये, जो उनके द्वारा शोध अध्ययन एवं कार्यक्रम क्रियान्वयन द्वारा दिये गये थे।

4.10 सीमान्त लागत सिद्धान्त

जे0 बी0 क्लार्क के अनुसार मजदूरी का निर्धारण उत्पादन में श्रमिक के सीमान्त भाग के आधार किया जाता है। नियोक्ता श्रमिक को वहीं पर रोक देता है जहाँ उसका भाग उसकी मजदूरी के बराबर हो जाता है।

4.11 मजदूरी भिन्नता

श्रमिकों के जो एक ही इकाई, विभिन्न इकाइयों के बीच व्यवसाय क्षेत्रों तथा अन्य समान श्रम बाजार में श्रमिकों के बीच मजदूरी का अन्तर मजदूरी भिन्नता कहलाता है।

अन्तर वैयक्तिक मजदूरी भिन्नता मुख्यतः गुणों जैसै-लिंग, उम्र, कौशल, और ज्ञान में भिन्नता के कारण होती है। जो एक ही इकाई या समान व्यवसाय की इकाई में काम करते हैं अन्तर प्रतिष्ठान या अन्तर इकाई मजदूरी में अन्तर को कहते हैं। ये भिन्नताएं मुख्यतः प्रतिष्ठान की भुगतान क्षमता के अनुसार बदलती है।

अन्तर व्यवसाय मजदूरी भिन्नता शारीरिक कौशल, सहनशीलता तथा ज्ञान में अन्तर के कारण होता है, तथा माँग एवं पूर्ति की स्थितियों में अन्तर के कारण।

अन्तर क्षेत्रीय मजदूरी भिन्नता मुख्यतः मांग एवं पूर्ति में अन्तर जीवन लागत तथा नियोक्ता की भुगतान क्षमता के कारण होता है।

4.12 मजदूरी निर्धारण

भारत में मजदूरी का निर्धारण मुख्यतः निम्न तीन संस्थाओं द्वारा किया जाता है।

1. सामूहिक सौदेकारी और न्यायधिकरण

सामूहिक सौदेकारी एक प्रक्रिया है जिसमें विपरीत शक्तियों के बीच सामंजस्य स्थापित करने के लिए समझौता होता है। यह मजदूरी से सम्बन्धित कर्मचारियों की समस्याओं का निदान करती है। यदि श्रमिकों की समस्याओं को इससे नहीं सुलझाया जाता है तो पंचनिर्णायकों, न्यायाधिकारकों एवं सामूहिक सौदेकारों को समझौतों के आधार पर ही मजदूरी का निर्धारण किया जाता है।

2. मजदूरी बोर्ड

यह मजदूरी के निर्धारण की, एक महत्वपूर्ण संस्था है जो भारत सरकार द्वारा नियुक्त की गई है। अलग-अलग उद्योगों के लिए अलग-अलग मजदूरी बोर्डों का गठन किया गया है। भारत सरकार ने मजदूरी बोर्ड का गठन द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अनुमोदन पर किया, जिसे बाद में बनाये रखा गया। इन बोर्डों का गठन किसी नियम के तहत न कर सरकार द्वारा अनुबंध के अधार पर किया गया है।

प्रत्येक मजदूरी बोर्ड में एक निष्पक्ष अध्यक्ष के अलावा दो स्वतंत्र सदस्य और दो या तीन श्रमिकों तथा प्रबंधक के प्रतिनिधि होते हैं। मजदूरी बोर्ड अपनी अनुशंसा देने के पूर्व अनेक तत्वों का अध्ययन करते हैं। पहले इनको सरकार के पास भेजा जाता है तथा सरकार की स्वीकृति के पश्चात् सम्बन्धित पक्षों पर लागू किया जाता है।

4.13 भुगतान आयोग

यह एक अन्य संस्थान है जो मजदूरी एवं अन्य सुविधाओं का निर्धारण एवं पुननिर्माण सरकारी तथा निजी विभागों में करती है। भुगतान आयोग सरकार (केन्द्रीय) तथा राज्य सरकारों द्वारा अलग-अलग किये जाते हैं।

4.14 मजदूरी भुगतान की पद्धतियाँ

मजदूरी भुगतान की पद्धतियों को तीन भागों में रख सकते हैं।

1. मूल पद्धतियाँ
2. प्रेरणात्मक मजदूरी पद्धतियाँ।
3. अतिरिक्त भुगतान पद्धतियाँ

4.15 मूल पद्धतियाँ

मजदूरी भुगतान की केवल दो मूल पद्धतियां है।

1. समयानुसार भुगतान पद्धति
2. कार्यानुसार भुगतान पद्धति।

4.16 समयानुसार भुगतान पद्धति

इस पद्धति में मजदूरी एवं वेतन का भुगतान समय के आधार पर किया जाता है। अर्थात् प्रति घंटा प्रतिदिन, प्रति सप्ताह, प्रतिमाह या प्रतिवर्ष की दर से भुगतान किया जाता है। इसमें नियोक्ता कर्मचारी के समय को क्रय कर लेता है एवं एक निश्चित समय के लिए निश्चित समय के लिए निश्चित भुगतान करने का प्रसंविदा करता है।

समयानुसार मजदूरी भुगतान वहाँ अधिक सन्तोषजनक होता है जहाँ -

1. उत्पादन इकाइयों की गणना करना एवं उनमें अन्तर स्थापित करना सम्भव नहीं।
2. कर्मचारियों के उत्पादों के गुण पर कोई नियंत्रण नहीं।
3. कर्मचारियों के प्रयास एवं परिणाम में कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है।
4. कार्य विलाप प्रायः होते हैं एवं कर्मचारी का उन पर कोई नियंत्रण नहीं है।
5. कार्य का गुण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।
6. निरीक्षण अच्छा है एवं निरीक्षक यह जानता है कि एक सामान्य दिन का कार्य क्या है।
7. उत्पादन इकाई में मजदूरी लागत की अग्रिम जानकारी की कोई विशेष आवश्यकता नहीं है।

गुण - इस पद्धति के निम्नलिखित गुण है -

1. सरलता।
2. निश्चित भुगतान का आश्वासन।
3. श्रेष्ठ गुणों की वस्तुओं के निर्माण की सम्भावना।
4. सामग्री की कम बर्बादी।
5. मशीनों एवं उपकरणों की कम टूट-फूट एवं घिसावट।
6. कर्मचारी सुरक्षा।

7. श्रम संगठनों का सहयोग।

8. कोई विकल्प ही नहीं।

दोष-

1. प्रेरणा का अभाव।

2. उत्पादन की मात्रा में कमी।

3. कुल लागत में मजदूरी की अनिश्चितता

4. कुशल श्रमिकों के मनोबल पर विपरीत प्रभाव।

4.17 कार्यानुसार मजदूरी

इस पद्धति में मजदूरी के भुगतान का आधार उसके द्वारा किया हुआ कार्य या उत्पादन से होता है। मजदूर को भुगतान उसके द्वारा निष्पादित कार्य या उत्पादन की मात्रा के अनुसार होता है। इस पद्धति में कार्य या उत्पादन की एक सुविधाजनक इकाई निश्चित की जाती है और मजदूरी प्रति इकाई कार्य का उत्पादन के सन्दर्भ में निश्चित की जाती है। उत्पादन की इकाईयाँ तथा प्रति इकाई दर मजदूरी का गुणा करके कुल मजदूरी की राशि निकाल ला जाती है।

कार्यानुसार मजदूरी निम्नलिखित परिस्थितियों में अधिक उपयोगी सिद्ध होती हैः

1. जहाँ उत्पादन या कार्य की इकाईयों की गणना करना सरल है एवं उनमें स्थापित करना सम्भव है।

2. जहाँ कर्मचारी के प्रयास एवं उत्पादन की मात्रा में प्रत्यक्ष सम्बन्ध है, अर्थात् जहाँ कार्य बहुत हाथों से होकर नहीं गुजरता।

3. जहाँ कार्य का प्रमाणीकरण सम्भव है।

4. जहाँ प्रति इकाई मजदूरी लागत का कुल लागत में अनुपात प्रतियोगिता की दृष्टि से निश्चित होना आवश्यक है अथवा उसका अग्रिम ज्ञान आवश्यक है।

5. जहाँ उत्पादकों के गुणों को विशेष महत्वपूर्ण नहीं समझा जाता।

6. जहाँ श्रमिकों के ऊपर अच्छा नियंत्रण रखना सम्भव नहीं है।

गुण -

1. प्रेरणादायक ।
2. अधिक न्यायसंगत।
3. प्रति इकाई मजदूरी लागत का उचित एवं अग्रिम ज्ञान।
4. निरीक्षण की आवश्यकता नहीं।
5. आय में वृद्धि का आश्वसन।
6. कर्मचारी एवं नियोक्ता में मधुर सह सम्बन्ध।
7. कर्मचारियों का ऊंचा मनोबल।

दोष

1. अधिक खर्चीली एवं कठिन।
2. कार्य के गुणों में कमी।
3. आय की निश्चितता का अभाव।
4. मशीनों एवं उपकरणों की अधिक घिसावट एवं टूट-फूट।
5. अधिक दुर्घटनाएँ एवं कर्मचारियों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव।
6. प्रबंध अकुशलता का कर्मचारियों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव
7. श्रम संघों द्वारा विरोध।
8. अप्रत्यक्ष श्रमिकों के लिए उपयोग असम्भव।

4.18 मजदूरी भिन्नता

मजदूरी नियोक्ता द्वारा अपने मजदूरों को दिया गया आर्थिक मुआवजा है जो कुछ अनुबन्धों के साथ उनकी सेवाओं के बदले में दी जाती है। इस प्रकार साधारण शब्दों में कहा जाय तो मजदूरी वह मूल्य है जो उत्पादन प्रक्रिया की सेवाओं के बदले में प्रदान किया जाता है। मजदूरी का निर्धारण अनेक सिद्धान्तों के आधार पर किया जाता है जिनमें जीविका सिद्धान्त, मजदूरी निधि सिद्धान्त, अधिक्य मूल्य, क्रमिक, घटोत्तरी, सौदेकारी, व्यवहारिक, सीमान्त लागत आदि के प्रमुख होते हैं। मजदूरी भिन्नता का अर्थ होता है दो श्रमकों की मजदूरी का भिन्न-भिन्न होना। मजदूरी निर्धारण सामूहिक सौदेकारी और

न्यायाधिकरण, मजदूरी बोर्ड तथा भुगतान आयोग द्वारा किया जाता है। मजदूरी भुगतान की तीन प्रमुख पद्धतियाँ पायी जाती है। इन पद्धतियों को मूल, प्रेरणात्मक मजदूरी तथा अतिरिक्त भुगतान पद्धतियाँ कहते हैं। मूल पद्धतियों के अन्तर्गत समयानुसार तथा कार्यानसार भुगतान पद्धतियाँ पायी जाती है। समयानुसार पद्धति में मजदूरी एवं वेतन का भुतान समय के अधार पर किया जाता है। जबकि कार्यानुसार पद्धति में मजदूरी के भुगतान का आधार उसके द्वारा किया हुआ कार्य या उत्पादन होता है।

4.19 बोध प्रश्न

प्र01 मजदूरी से क्या समझते हो? इसके प्रमुख सिद्धान्तों का वर्णन करो।

प्र02 मजदूरी भिन्नता का क्या अर्थ है॰ इसको निर्धारित करने वाली प्रमुख संस्थाएँ कौन सी हैं?

प्र03 मजदूरी भुगतान की मूल पद्धतियों का वर्णन करें।

4.20 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. योडर, डेल - ''पर्सनेल मैनेजमेन्ट इन्डस्ट्रियल रिलेशन्स'', प्रिन्टिक हाल, नई दिल्ली-1980
2. मैक्ग्रेमर डगलस - '' द ह्यूमन साइड ऑफ इन्टरप्राइस'', मैग्राहिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क, 1964।
3. फिल्प्पों एडविन बी0, ''पर्सनेल मैनेजमेन्ट, मैक्ग्राहिल, टोक्यो, 1981

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

M.COM-405

मानव संसाधन प्रबन्ध-II

Human Resource Management-II

खण्ड

2

औद्योगिक सम्बन्ध

इकाई - 1 5

कर्मचारी कल्याण

इकाई - 2 15

औद्योगिक सम्बन्ध और श्रमसंघ

इकाई - 3 29

परिवेदना प्रबन्ध

इकाई - 4 40

कर्मचारी सशक्तिकरण

इकाई - 5 50

श्रमिक सहभागिता

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

संरचनात्मक सम्पादन

डॉ0 मंजूलिका श्रीवास्तव	निदेशक, दूरस्थ शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली

विषयगत सम्पादन

प्रो0 जगदीश प्रकाश	पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डॉ0 ज्ञान प्रकाश	असिस्टेन्ट प्रोफेसर, प्रबन्ध
	उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड-4 परिचय

किसी भी संगठन में स्वस्थ एवं सौहार्दपूर्ण औद्योगिक सम्बन्ध अत्यन्त आवश्यक होते हैं। इस प्रकार के औद्योगिक सम्बन्ध संगठन के दीर्घकालीन अस्तित्व को सुनिश्चत करते हैं। इन सम्बन्धों को सुदृढ़ आधार कर्मचारी कल्याण के द्वारा प्राप्त होता है। प्रस्तुत खण्ड में कर्मचारी कल्याण के विविध पहलुओं का वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त औद्योगिक सम्बन्धों को श्रम संघ तथा आयाम प्रदान करते हैं। परिवेदना प्रबन्ध के अन्तर्गत किसी भी प्रकार की असंतुष्टि जो कि औद्योगिक सम्बन्धों को क्षति पहुँचाने का कार्य करती है को समाप्त किया जाता है। कर्मचारी सशक्तिकरण में कर्मचारी को शिक्षण एवं प्रशिक्षण द्वारा भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के योग्य बनाने का प्रयास किया जाता है। अन्त में औद्योगिक सम्बन्धों को श्रमिक सहभागिता को नयी दिशा देने का प्रयास किया जाता है।

इकाई 1 : कर्मचारी कल्याण

इकाई की रूपरेखा

1.1 परिचय

1.2 उद्देश्य

1.3 श्रम कल्याण का अर्थ

1.4 श्रम कल्याण का क्षेत्र

1.5 श्रम कल्याण का महत्व

1.6 श्रम कल्याण का अभिकरण

1.6.1 भारत सरकार द्वारा किये जा रहे श्रम कल्याण

1.6.2 नियोक्ता द्वारा किये जा रहे श्रम कल्याण

1.6.3 श्रम संघों द्वारा श्रम कल्याण

1.6.4 अन्य अभिकरणों द्वारा श्रम कल्याण

1.7 श्रम कल्याण के सिद्धान्त

1.8 श्रम कल्याण का दृष्टिकोण

1.8.1 परम्परावादी दृष्टिकोण

1.8.2 औद्योगिक सक्षमता दृष्टिकोण

1.8.3 सामाजिक दृष्टिकोण

1.9 सारांश

1.7 बोध प्रश्न

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.1 परिचय

श्रमिक संगठन के अभिन्न भाग होते हैं। उनके द्वारा निष्पादित कार्यो द्वारा ही संगठन दीर्घकाल तक अपने अस्तित्व को बनाये रखने में सक्षम होते हैं। श्रम कल्याण के अन्तर्गत श्रमिकों को अनेक प्रकार की सुख सुविधाएँ कार्य दिवसों में प्रदान की जाती है जिसके द्वारा उनका जीवन स्तर ऊँचा उठ सके। श्रम कल्याण के द्वारा जहाँ एक

ओर स्वस्थ समाज का निर्माण होता है वही औद्योगिक उत्पादकता में भी वृद्धि होती है तथा औद्योगिक शान्ति सुनिश्चित होती है। मुख्यतः श्रम कल्याण नियोक्ता द्वारा किये जाते हैं परन्तु सरकार एवं श्रम संगठन अन्य अभिकरण है जो श्रम कल्याण को सुनिश्चित करते हैं।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सक्षम होंगे --

1. श्रम कल्याण का अर्थ एवं क्षेत्र जानने में।
2. श्रम कल्याण का महत्व पहचानने में।
3. श्रम कल्याण अभिकरणों के बारे में।
4. श्रम कल्याण के सिद्धान्त एवं दृष्टिकोण के बारे में।

1.3 श्रम कल्याण

श्रम कल्याण का तात्पर्य उनके कार्यों से है जो श्रम सन्नियमो द्वारा निर्धारित न्यूनतम प्रमाणों के अतिरिक्त किये जाते हैं तथा जिनका उद्देश्य श्रमिकों के स्वास्थ्य, सुरक्षा, सामान्य भलाई और कार्यक्षमता में सुधार लाना होता है। ''श्रम कल्याण कार्यों का अभिप्राय श्रमिकों को प्रदान की जाने वाली उन सुविधाओं से है जिनका सम्बन्ध श्रमिकों के सुख, स्वास्थ्य एवं समृद्धि से होता है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम-संगठन के अनुसार ''श्रम कल्याण का अर्थ उन सेवाओं और सुविधाओं से है, जो कारखाने के अन्तर या समीपवर्ती स्थानों में स्थापित की गई है, ताकि उनमें काम करने वाले श्रमिक स्वस्थ एवं शान्तिपूर्ण परिस्थिति में काम कर सके तथा स्वास्थ्य एवं नैतिक स्तर ऊंचा उठाने वाली सुविधाओं का लाभ उठा सकें।

1.4 श्रम कल्याण का क्षेत्र

जून 1956 में हुए अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन के 39 वें अधिवेशन में श्रम सम्मेलन के 39वें श्रम कल्याण के क्षेत्र में 5 प्रकार की सेवाओं एवं सुविधाओं को सम्मिलित किया गया।

1- औद्योगिक प्रतिष्ठान के खान-पान की सुविधायें।

2- आराम एवं मनोरंजन की सुविधाएँ।

3- स्थायी श्रमिकों के लिए आवास की व्यवस्था।

4- स्वच्छता एवं चिकित्सा की व्यवस्था।

5- कार्यस्थल तक आने-जाने के लिए यातायात की सुविधाएँ।

भारत की श्रम अनुसंधान कमेटी के अनुसार 'श्रम कल्याण क्षेत्र में सेवायोजकों, सरकार तथा दूसरी संस्थाओं द्वारा श्रमिकों के बौद्धिक, शारीरिक, नैतिक एवं आर्थिक विकास हेतु सम्पन्न किये जाने वाले कार्यों का समावेश होता है। ये कार्य उन सुविधाओं के अतिरिक्त होते हैं जिन्हें श्रमिक अनुबन्धात्मक सम्बन्ध या विधान के अन्तर्गत सेवायोजकों से प्राप्त करते हैं। स्पष्टतः श्रम कल्याण की परिधि में सेवायोजकों द्वारा ऐच्छिक रूप से अकेले या श्रमिकों के सहयोग से सम्पन्न आवास-व्यवस्था, शिक्षा एवं चिकित्सा सुविधायें, सरकारी समितियाँ, नर्सरी एवं शिशु-गृह, स्वास्थ्यप्रद स्थान, सवैतनिक अवकाश, सामाजिक बीमा, बीमारी एवं प्रसूति-लाभ की योजनाएं, भविष्य निधि एवं पैंशन की व्यवस्था, आदि कार्य सम्मिलित होते हैं।

1.5 श्रम कल्याण कार्यों का महत्व

श्रम कल्याण अनेकानेक कारणों से अत्यन्त महत्वपूर्ण माने जाते हैं। कुछ प्रमुख कारण निम्न हैंः

1. औद्योगिक केन्द्रों में स्थायी श्रम शक्ति का निर्माण

भारत जैसे देश में स्थायी एवं कुशल शक्ति का निर्माण नहीं हो पाया है जिसका कारण श्रमिकों का प्रवासी स्वभाव है। श्रमिकों के इस स्वभाव के परिणाम स्वरूप श्रमिकों की कार्यक्षमता, कारखाने में उनकी उपस्थिति तथा श्रम संघों की सबलता पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। श्रमिकों की कार्य एवं जीवन दशाओं में सुधार द्वारा औद्योगिक केन्द्रों में स्थायी श्रम शक्ति का निर्माण किया जा सकता है।

2. औद्योगिक शान्ति की स्थापना

कल्याण कार्यों द्वारा श्रमिकों में उत्तरदायित्व की भावना प्रोत्साहित की जा सकती है, जो श्रमिकों एवं प्रबन्धकों के मध्य होने वाले विवादों के अवसर घटाने में सहायक हो सकती है। इस प्रकार श्रम कल्याण कार्यों द्वारा औद्योगिक शान्ति की स्थापना की जा सकती है।

3. श्रमिकों की बुरी आदतों का उन्मूलन

श्रमिकों में विद्यमान बुरी आदतों (मद्यपान, जुआखोरी, वेश्यागमन आदि) को दूर करने के लिए मनोरंजन, आवास, खेलकूद, शिक्षा एवं चिकित्सा की व्यवस्था नितांत आवश्यक है। कल्याण सुविधाएं औद्योगिक श्रमिकों को देश के अच्छे नागरिक बनाती है तथा उनमें उद्योग, समाज एवं राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्व की भावना जागृत करती है।

4. अनुपस्थितता एवं श्रमिकावर्त की दर घटाना

कर्मचारियों के लिए सुख-सुविधाओं का व्यवस्था उद्योगों में अनुपस्थितता एवं श्रमिकावर्त की दरें घटाती है। कर्मचारी कल्याण कर्मचारियों के कार्य और जीवन की दशाओं में सुधार करता है जिससे कर्मचारी अपने कार्य से अधिकाधिक संतुष्टि अनुभव करता है। इस प्रकार कर्मचारी की कार्य छोड़ने की इच्छा या आवश्यकता कम हो जाती है तथा उद्योग पर अनुपस्थिता का भार हल्का हो जाता है।

5. श्रमिकों को स्वस्थ एवं कार्यकुशल बनाना

भारत जैसे देश में श्रमिकों के रहन-सहन का स्तर काफी नीचा है क्योंकि ऐसे देशों की मजदूरी का स्तर काफी नीचा है। सस्ते आवास, निःशुल्क चिकित्सा शिक्षा और मनोरंजन की सुविधाएँ उपलब्ध कराके श्रमिकों की वास्तविक मजदूरी बढ़ाई जा सकती है। इस प्रकार श्रमिकों का रहन-सहन स्वास्थ्य एवं कार्यक्षमता का स्तर उन्नत होगा, जो औद्योगिक उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव डालेगा।

6. विकास के लक्ष्यों की पूर्ति

भारत में औद्योगिकरण का कार्यक्रम व्यापक स्तर पर लागू किया गया है। इस स्थिति में श्रम कल्याण निःसन्देह महत्वपूर्ण हो जाता है। उत्पादन बढ़ाने एवं विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए श्रमिकों की सुख सुविधाओं समुचित व्यवस्था आवश्यक है। इस प्रकार श्रमिक स्वयं को सुख और सन्तुष्ट अनुभव करेंगे तथा मन लगाकर उत्पादन वृद्धि में सहयोग करेंगे जिससे विकास के लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

7. कल्याणकारी राज्य की स्थापना

कल्याणकारी राज्य का उद्देश्य अन्तिम रूप से सम्पूर्ण समाज की भलाई करना होता है। इस दृष्टि से श्रमिक वर्ग जो समाज का एक कमजोर एवं शोषित अंग है की भलाई को सर्वोच्च प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

8. सम्पूर्ण समाज के लाभ

श्रमिक एवं उद्योग समाज के अंग होते हैं। अतः उनकी भलाई एवं विकास के लिए जो कुछ भी किया जाता है उससे अन्ततः सम्पूर्ण समाज लाभान्वित होता है। जहाँ एक ओर कैन्टीन में सस्ते एवं सन्तुलित तथा चिकित्सा सुविधाओं से श्रमिकों एवं उनके आश्रितों का स्वास्थ्य सुधारता है वही स्वस्थ मनोरंजन द्वारा श्रमिकों की अनेक बुरी आदतें छूट जाती हैं जो समाज के लिए अत्यन्त लाभकारी होता है।

1.6 श्रम कल्याण अभिकरण

भारत में श्रम कल्याण की पहचान बहुत पुरानी नहीं है अर्थात् भारत में श्रम कल्याण के अभिकरण नये हैं। भारत में श्रम कल्याण के मुख्य अभिकरण, नियोक्ता, सरकार तथा श्रम संघ है। इन अभिकरणों द्वारा किये जा रहे कल्याण के कार्यक्रम अभी धीमी गति से हो रहे हैं।

1.6.1 भारत सरकार द्वारा किये जा रहे श्रम कल्याणकारी कार्य -

द्वितीय विश्व युद्ध तक भारत सरकार द्वारा श्रम कल्याण में

बहुत थोड़ा कार्य किया गया था। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान पहली बार श्रमिकों के कल्याण के लिए अध्यादेश लाया गया तथा स्वतंत्रता के पश्चात् एक कल्याणकारी राज्य की संकल्पना प्रस्तुत की गयी, तथा इसको सुनिश्चित करने के अनेक नियम बनाये गये।

कारखाना अधिनियम, 1986 में श्रम कल्याण के अनेक मानक स्थापित किये गये हैं। इन मानकों को भी कारखानों पर अनिवार्य बनाया गया है। इसके अतिरिक्त सरकार ने श्रम कल्याण निधि कुछ प्रतिष्ठानों में व्यवस्था की है। इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा किये गये कुछ कार्य निम्न है-

- श्रमिकों की शिक्षा के लिए केन्द्रीय बोर्ड का गठन।
- राष्ट्रीय सुरक्षा पुरस्कार।
- श्रमवीर पुरस्कार
- समान पारिश्रमिक अधिनियम।

इसके अतिरिक्त सभी राज्यों की सरकारें अपने यहाँ श्रम कल्याण के लिए अनेक योजनाएँ प्रदेश स्तर पर चला रही हैं।

1.6.2 नियोक्ता द्वारा किये जा रहे श्रमकल्याण कार्य -

यद्यपि कि आज अधिक से अधिक श्रम कल्याण कानूनों द्वारा आवश्यक कर दिये गये हैं परन्तु फिर भी अनेक कल्याण कार्यक्रम नियोक्ता द्वारा किये जाते हैं। जहाँ अनेक नियोक्ता लाभों में वृद्धि के लिए इन कार्यों को आवश्यक नहीं मानते, वही कुछ नियोक्ता श्रमिकों के कल्याण के लिए अनेक योजनाओं का क्रियान्वयन करते हैं। दवाइयाँ, अस्पताल, भोजनालय, कम मूल्य की दुकानें, सहकारी समितियाँ मनोरंजन क्लब आदि ऐसे ही अनेक उदाहरण है।

श्रम कल्याण की दिशा में नियोक्ताओं द्वारा किये गये कार्य निम्न है-

— कुछ नियोक्ता परिवार नियोजन को बहुत प्रमुखता से

अपने कल्याण कार्यक्रमों में शामिल करते हैं।

— कम दामों पर पौष्टिक आहार की सुविधा देना।

— सस्ती दर पर वस्तुएँ तथा सेवाएँ प्रदान करना।

1.6.3 श्रम संघो द्वारा श्रम कल्याण कार्य -

श्रम संघों की संगठनात्मक तथा वित्तीय मजबूरियों के कारण इनके द्वारा किये गये श्रम कल्याण कार्य लगभग नगण्य है। केवल कुछ संघ जैसे- अहमदाबाद टेक्सटाइल श्रम संघ लगभग 70 प्रतिशत अपनी आय का श्रमिकों के कल्याण पर खर्च करती है।

चीनी श्रमिक संघ (एच0एम0एस0) महाराष्ट्र ने श्रमिकों के लिए एक सुसज्जित अस्पताल खोला है। एच0एम0एस आई एनटीसी के साथ मिलकर लोगों को रोजगार प्रदान कर रही है। फिर भी श्रम संघों के कार्य उत्साहजनक नहीं है क्योंकि वे श्रम कल्याण कार्यों में रूचि नहीं लेते हैं जो कि सही नेतृत्व का अभाव, आपसी विवाद तथा पैसे की कमी के कारण है।

1.6.4 अन्य अभिकरणों द्वारा श्रम कल्याण कार्य -

उद्योगों से जुड़े अभिकरणों के अतिरिक्त अन्य ऐसे अभिकरण है जो कल्याण कार्यक्रमों को चलाते हैं। इनमें मुख्यतः समाजसेवी तथा कुछ स्वैच्छिक संस्थान होते हैं जो श्रम कल्याण के कार्यों को करते हैं। नगरों की नगरपालिकायें भी श्रम कल्याण के कार्यों को करती है।

1.7 श्रम कल्याण के सिद्धान्त

1. सेवा ऐसी हो जो श्रमिकों की वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति करे सर्वप्रथम प्रबन्धकों को श्रमिकों के सक्रिय भागीदारी द्वारा यह जानने का प्रयास करना चाहिए कि उनकी वास्तविक आवश्यकताएं क्या हैं? इन आवश्यकताओं के निर्धारण के पश्चात् श्रम कल्याण कार्यक्रमों को लागू किया जाना चाहिए।

2. नियोक्ता इस भावना से ग्रसित न हो कि वह परोपकार कर रहा है।

3. सेवाओं का मूल्य गणना योग्य होना चाहिए तथा वित्तीय स्थापना का ठोस आधार होना चाहिए।

4. सेवा परिस्थितियों के अनुसार होनी चाहिए-

श्रमिकों की उम्र, लिंग, वैवाहिक स्थिति, बच्चों की संख्या, कार्य के प्रकार और आय स्तर के अन्तर के कारण लोगों की किसी निश्चित लाभ की पसन्द भिन्न-भिन्न होती है।

5. सेवाओं का आवर्ती निर्धारण या मूल्यांकन होना चाहिए तथा समय-समय पर सुधार प्रतिपुष्टि के आधार पर होना चाहिए।

1.8 दृष्टिकोण

1.8.1 परम्परावादी दृष्टिकोण -

यह परम्परावादी दृष्टिकोण था जिसने उद्योगों में श्रम कल्याण की शुरुआत किया। कुछ नियोक्ता तथा अन्य मानवता, धार्मिकता, कल्याणकारी मान्यताओं ने औद्योगिक श्रमिकों की हालत सुधारने के लिए बहुत कुछ किया। परन्तु परम्परावादी युग ने बहुत कम प्रभाव छोड़ा। यद्यपि कि प्रथम विश्व युद्ध के दौरान काफी मात्रा में श्रम कल्याण का कार्य किया गया जो कि मुख्यतः दबाव एवं तनाव का उत्पाद था, लेकिन यह एक भ्रम था।

1.8.2 औद्योगिक सक्षमता दृष्टिकोण -

परम्परावादी दृष्टिकोण जल्द ही अपयश को प्राप्त हुआ। श्रमिकों की इच्छा का परिणाम ''औद्योगिक प्रौढ़ता'' थी 1930 की महान मंदी ने अमेरिका सहित अनेक देशों की नियोक्ता प्रायोजित वृत्तीय सेवाओं को समाप्त कर दिया। नियोक्ता तथा सामान्य लोगों के बदले व्यवहार के कारण बड़ी औद्योगिक इकाईयों का जन्म हुआ। व्यक्तिगत सम्बन्धों का स्थान अव्यक्तिगत अधिकार और प्रबन्धन ने ले लिया। समर्पण तथा सक्षणता की कठिनाइयों के

परिणाम स्वरूप श्रम कल्याण लागू करने के प्रयास किये गये। अतः कल्याणकारी कार्यक्रम स्वैच्छिक आनन्द के लिए होने लगे।

1.8.3 सामाजिक दृष्टिकोण -

इस दृष्टिकोण में न तो कल्याणकारी मान्यताएँ थी और न ही श्रमिक सक्षमता की अत्यधिक वृद्धि। श्रम कल्याण इस दृष्टिकोण में सामाजिक आर्थिक नीति एक हथियार की तरह प्रयोग की जाती है। इस नीति में श्रम कल्याण का उद्देश्य अन्ततः लोगों की सेवा करना, संघर्ष के बोझ को उठाना था जो कि जीवन की कठिनाई को कम करने में सहायक बन सके।

सारांश

श्रम कल्याण का तात्पर्य उन कार्यों से है जो श्रम सन्नियमों द्वारा निर्धारित न्यूनतम प्रमापों के अतिरिक्त किये जाते हैं। इनका उद्देश्य श्रमिकों के स्वास्थ्य, सुरक्षा, सामान्य भलाई एवं कार्य क्षमता में सुधार लाना है। श्रम कल्याण का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत होता है। इसके अन्तर्गत औद्योगिक प्रतिष्ठान के खान-पान की सुविधायें, आराम एवं मनोरंजन की सुविधाएं, स्थायी श्रमिकों के लिए आवास की व्यवस्था, स्वच्छता एवं चिकित्सा की व्यवस्था तथा कार्यस्थल तक आने जाने के लिए यातायात की सुविधाएं आदि को प्रमुख रूप से सम्मिलित किया जाता है। श्रम कल्याण कार्यों का अत्यधिक महत्व पाया जाता है। यह औद्योगिक केन्द्रों में स्थायी श्रम शक्ति का निर्माण, औद्योगिक शक्ति की स्थापना, श्रमिकों की बुरी आदतों का उन्मूलन, अनुपस्थितता एवं श्रमिकावर्त की दर घटाना, तथा कल्याणकारी राज्य की स्थापना आदि को सम्मिलित करती है। श्रम कल्याण अभिकरण वे संस्थाएँ होती हैं जिनके द्वारा श्रम कल्याण सुनिश्चित किया जाता है। श्रम कल्याण अभिकरणों में सरकार, नियोक्ता श्रम संघ तथा अन्य समाजसेवी संस्थाएँ आती हैं। श्रम कल्याण का कार्य कुछ निश्चित सिद्धान्तों के आधार पर किया जाता है। इनके अन्तर्गत सेवा ऐसी हो जो श्रमिकों का वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति करे

तथा उसे परिस्थितियों के अनुसार होनी चाहिए। कर्मचारी कल्याण परम्परावादी, औद्योगिक सक्षमता तथा सामाजिक दृष्टिकोण के आधार पर कार्य करता है।

1.10 बोध प्रश्न

प्र01 श्रम कल्याण का क्या अर्थ है? श्रम कल्याण के महत्व को रेखांकित करें।

प्र02 प्रमुख श्रम कल्याण अभिकरणों को संक्षेप में वर्णन करें।

प्र03 प्रमुख श्रम कल्याण के दृष्टिकोण को रेखांकित करें।

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. योडर, डेल-''पर्सनेल मैनेजमेन्ट एण्ड इन्डस्ट्रियल रिलेशन्स'' प्रिन्टिक हाल, नई दिल्ली - 1980

2. मैक्ग्रेमर डगलस - ''द ह्यूमन साइड आफ इन्टरप्राइस'' मैक्ग्राहिल बुक कम्पनी न्यूयार्क 1964।

3. फिलप्पों एडविन बी0- ''पर्सनेल मैनेजमेन्ट मैक्ग्राहिल टोक्यों 1981।

इकाई 2 : औद्योगिक सम्बन्ध और श्रमसंघ

इकाई की रूपरेखा

2.1 परिचय

2.2 उद्देश्य

2.3 अर्थ

2.4 प्रकृति एवं विशेषताएँ

2.5 औद्योगिक सम्बन्ध का उद्देश्य

2.6 औद्योगिक सम्बन्ध का क्षेत्र

2.7 औद्योगिक सम्बन्ध के कार्य

2.8 औद्योगिक सम्बन्ध के सिद्धान्त

2.9 औद्योगिक सम्बन्धों की आवश्यकता व महत्व

2.10 खराब औद्योगिक सम्बन्धों के कारण

2.11 अच्छे अथवा स्वस्थ औद्योगिक सम्बन्धों की शर्तें या सुलह

2.12 श्रम संबंधी परिभाषा

2.13 श्रम संघों के उद्देश्य

- 2.13.1 आर्थिक उद्देश्य
- 2.13.2 सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक उद्देश्य
- 2.13.3 राजनैतिक उद्देश्य
- 2.13.4 अन्य उद्देश्य

2.14 श्रम संघों के कार्य

- 2.14.1 संस्थान के अन्दर किये जाने वाले कार्य
- 2.14.2 संस्थान के बाहर किये जाने वाले कार्य
- 2.14.3 राजनीतिक कार्य

2.15 सारांश

2.16 बोध प्रश्न

2.17 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.1 परिचय

संगठनों की सफलता एवं विकास के लिए अच्छे औद्योगिक सम्बन्धों की आवश्यकता होती है। यह सम्बन्ध कर्मचारी एवं नियोक्ता के मध्य होता है जिसको बनाये रखने एवं उसमें उत्तरोत्तर सुधार के लिए श्रम संघ अतिथि भूमिका का निर्वाह करते हैं। औद्योगिक विवादों के कारणों को दूर करने में श्रम संघ अहम् भूमिका का निर्वाह करते हैं। इस प्रकार श्रम संघ अपने कार्यों द्वारा स्वस्थ औद्योगिक सम्बन्धों का निर्माण करते हैं एवं संगठनों के विकास को सुनिश्चित करते हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सक्षम होंगे --

- औद्योगिक सम्बन्धों के बारे में जानने में।
- औद्योगिक सम्बन्धों की आवश्यकता एवं महत्व समझने में।
- औद्योगिक विवाद एवं उसके कारणों की जानकारी प्राप्त करने में।
- श्रम संघों के अर्थ एवं उद्देश्य को जानने में।
- श्रम संधों द्वारा किये जा रहे कार्यों का ज्ञान प्राप्त करने में।

2.3 अर्थ

औद्योगिक सम्बन्ध का शाब्दिक अर्थ है उद्योगों से सम्बन्धित पक्षकारों के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध एवं व्यवहार उद्योगों से सम्बन्धित पक्षकारों में सेवानियोजक, कर्मचारी एवं सरकार तथा श्रमसंघों के पारस्परिक सम्बन्धों एवं व्यहारों से है। वैसे औद्योगिक सम्बन्ध एक गतिशील तथा विकासशील अवधारणा है इसकी सीमाओं का निर्धारण नहीं किया जा सकता है।

डेल योडर के अनुसार - ''औद्योगिक सम्बन्ध शब्द के अन्तर्गत श्रमिकों की भर्ती, चयन 'प्रशिक्षण' सेविवर्गीय प्रबन्ध के

साथ-साथ सामूहिक सौदेबाजी सम्बन्धी नीतियाँ व व्यवहार सम्मिलित किये जाते हैं।'' अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार - औद्योगिक सम्बन्ध या तो राज्य और सेवा नियोजकों तथा श्रमिकों के संगठनों के मध्य सम्बन्धों अथवा पेशेवर संगठनों के आपसी सम्बन्धों का अध्ययन है।

अतः कहा जा सकता है कि ''औ्द्योगिक सम्बन्ध, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक शक्तियों के प्राण है जो औद्योगिक जगत में रोजगार की प्रक्रिया में कर्मचारियों, सेवानियोजकों, श्रमसंघों व सरकार के मध्य अन्तः संबंधों का निर्माण करते हैं।''

2.4 औद्योगिक सम्बन्ध की प्रकृति अथवा विशेषताएं

1. औद्योगिक सम्बन्धों से आशय सेवानियोजक, कर्मचारी, सरकार एवं श्रमसंधों के पारस्परिक सम्बन्धों एवं व्यवहारों से है।
2. औद्योगिक सम्बन्ध कर्मचारियों के रोजगार से सम्बन्धित होते हैं।
3. औद्योगिक सम्बन्ध गतिशील सामाजिक-आर्थिक प्रक्रिया है।
4. यह कारण न होकर सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक शक्तियों का परिणाम है।
5. औद्योगिक संबंध पारस्परिक सम्बन्धों में सुधार की प्रक्रिया है जो निरन्तर चलती रहती है।
6. औद्योगिक सम्बन्धों के पक्षकार पारस्परिक सहयोग एवं समायोजन द्वारा सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बनाने का प्रयास करते हैं।
7. सरकारी नीतियों तथा नियमों द्वारा औद्योगिक सम्बन्धों का नियमन किया जाता है।
8. औद्योगिक सम्बन्ध संगठन के सम्पूर्ण प्रबन्ध का एक अंग है। यह संगठन के अन्य कार्यों जैसे उत्पादन विक्रय, वित्त आदि के समान ही एक महत्वपूर्ण कार्य है।

9. औद्योगिक सम्बन्ध व संगठन की नीतियाँ एक दूसरे को प्रभावित करते हैं।

10. इसमें वैयक्तिक व सामूहिक दोनों प्रकार के सम्बन्धों को सम्मिलित किया जाता है। रोजगार के दौरान कोई विवाद किसी कर्मचारी से सम्बन्धित हो सकती है, या सभी कर्मचारियों से सम्बन्धित हो सकता है। ऐसे विवाद का निपटारा औद्योगिक सम्बन्धों के क्षेत्र में ही आता है।

2.5 उद्देश्य

औद्योगिक सम्बन्धों का मुख्य उद्देश्य कर्मचारियों व सेवा नियोजकों के मध्य मधुर सम्बन्धों की स्थापना करना है। स्काट क्लोदियर तथा स्प्रीगल के अनुसार-''औद्योगिक सम्बन्ध का मुख्य उद्देश्य व्यक्तियों का अधिकतम विकास करना, कर्मचारियों एवं सेवा नियोजकों के मध्य कार्यकारी सम्बन्धों की स्थापना तथा भौतिक साधनों की भाँति मानवीय साधनों की इच्छानुसार कार्य करने की दिशा प्रदान करना है।

औद्योगिक संबंधों के उद्देश्यों को संक्षेप में निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है।

1. कर्मचारियों, सेवानियोजकों, श्रमसंघों व सरकार के मध्य अच्छे सम्बन्ध स्थापित करना।
2. कर्मचारियों का अधिकतम वैयक्तिक विकास करना।
3. देश में औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना करना।
4. औद्योगिक विवादों की संख्या में कमी करना और प्रयास यह हो कि विवाद हो ही न।
5. हड़ताल, तालाबन्दी, छँटनी आदि औद्योगिक विवाद उत्पन्न होने पर उसे सफलतापूर्वक शीघ्र निपटाना।
6. कर्मचारियों के लिए सुरक्षा व कल्याणकारी योजनाओं की व्यवस्था करना।

7. कर्मचारियों की सेवा मुक्ति दर एवं न्यायोचित क्षतिपूर्ति की व्यवस्था ।

9. उत्पादन वृद्धि हेतु प्रेरणात्मक योजनाएं लागू करना।

10. भौतिक साधनों एवं मानवीय साधनों में परस्पर सामंजस्य स्थापित करना।

11. औद्योगीकरण के फलस्वरूप उत्पन्न सामाजिक असंतुलन को दूर करने एवं शान्ति पूर्ण वातावरण बनाये रखने का प्रयास।

12. श्रमिकों एवं प्रबन्धों में एक दूसरे के प्रति आदर एवं प्रतिष्ठा जागृत करना।

13. न्यायपूर्ण व पर्याप्त मजदूरी एवं वेतन पद्धतियों की व्यवस्था।

14. उद्योग के महत्वपूर्ण भागीदार के रूप में मान्यता दिलाने के लिए प्रबन्ध में सहभागिता दिलाना।

2.6 औद्योगिक सम्बन्धों का क्षेत्र

यद्यपि औद्योगिक सम्बन्ध नियोक्ता, कर्मचारी एवम् प्रबन्ध सम्बन्धों से मुख्य रूप से सम्बन्धित है परन्तु उसके क्षेत्र को इस सीमा तक ही सीमित रखना उचित नहीं है। इसमें श्रम संबंध और जन संबंध या सामुदायिक संबंध भी सम्मिलित है। अच्छे औद्योगिक संबंध उद्योगों में न केवल सद्भाव का वातावरण तैयार करते हैं बल्कि औद्योगिक विकास एवं उत्पादन वृद्धि में भी सहायक होते हैं। ये कर्मचारियों के अधिकारों एवं संबंध के हितों की रक्षा करतें हैं।

आइ0एल0ओ0 ने औद्योगिक संबंधों के क्षेत्र में राज्य एवं सेवा नियोजक के मध्य संबंध तथा श्रमसंघों व व्यावसायिक संगठनों के मध्य संबंधों को सम्मिलित किया है। औद्योगिक संबंधों ने संघों की स्वतंत्रता तथा संगठन के अधिकार का रक्षण, सामूहिक सौदेबाजी का अधिकार, सामूहिक समझौता, मध्यस्थता व पंचनिर्णय तथा अर्थव्यवस्था के विभिन्न स्तरों पर अधिकारियों एवं व्यावसायिक संगठनों के मध्य सहयोग स्थापित करना है।

2.7 औद्योगिक संबंधों के कार्य

यह सही है कि औद्योगिक संबंधों का प्राथमिक कार्य प्रबंध व श्रमिकों के मध्य मधुर संबंधों की स्थापना करना है लेकिन औद्योगिक संबंधों के विभिन्न कार्यों को केवल इस सीमा तक सीमित रखना उचित नहीं है। औद्योगिक संबंध के कार्यों में निम्नलिखित सम्मिलित किया जाता है।

1. सेवा नियोजकों व श्रमिकों के मध्य खाई को पाटना।
2. सेवा नियोजकों व श्रमिकों के मधुर संबंधों की स्थापना करना व उन्हें बनाये रखना।
3. श्रमसंघों के रचनात्मक योगदान को सुनिश्चित करना।
4. औद्योगिक संघर्षों से बचना तथा मधुर संबंध बनाये रखकर उत्पादन कार्य कुशलता को बढ़ाना।
5. श्रमिकों व प्रबंध के हितों की रक्षा करना।
6. औद्योगिक प्रजातंत्र की स्थापना करना व बनाये रखना।
7. उद्योग में हड़ताल, तालाबंदी घेराव आदि को रोकना व उद्योगों के वातावरण को अच्छा बनाये रखना।
8. औद्योगिक उत्पादकता को बढ़ाना व देश के आर्थिक विकास में योगदान देना।
9. उत्पादन प्रक्रिया में श्रमिकों की सहभागिता सुनिश्चित करना।
10. प्रबन्धकों व शासितों में परस्पर सम्पर्क बनाये रखना।
11. श्रमसंघों के सहयोग प्राप्त करना।
12. सरकारी नियमों एवं कानूनों का अनुपालन आदि।

2.8 औद्योगिक संबंध से सिद्धान्त

औद्योगिक संबंध के कुछ सिद्धान्त विकसित किये गये हैं, जिनके आधार पर औद्योगिक संबंध के विभिन्न कार्यों का संचालन

किया जाता है। आई0एल0ओ0 द्वारा निम्नलिखित सिद्धान्त दिये गये-

1. श्रम संघ का नियोक्ता संघ द्वारा स्वतंत्र रूप से विचारों का आदान-प्रदान।
2. सामूहिक सौदेबाजी द्वारा विवाद सुलझाने की चेष्टा।
3. श्रम संघ एवं नियोक्ता संघ में सहयोग।
4. सहभागीदारी का सिद्धान्त
5. सही व्यक्ति को सही कार्य का सिद्धान्त।
6. वैयक्तिक विकास का सिद्धान्त।
7. प्रभावी संचार का सिद्धान्त।
8. उचित पारिश्रमिक का सिद्धान्त।
9. श्रम के प्रति आदर का सिद्धान्तय
10. न्याय व समता का सिद्धान्त।

2.9 औद्योगिक संबंधों की आवश्यकता व महत्व

1. मानवीय संसाधनों का कुशलतम उपयोग।
2. उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि होना।
3. उद्योगों तथा देश में औद्योगिक शान्ति की स्थापना।
4. औद्योगिक प्रजातंत्र की स्थापना।
5. उत्पादन लागत में मितव्ययिता।
6. हड़तालों, तालाबंदी व घेराव में कमी।
7. श्रमिकों की कुशलता में वृद्धि तथा श्रम विकास पर बल।
8. सामाजिक सुरक्षा तथा श्रम विकास पर बल।
9. बीमार इकाइयों की संख्या में कमी।
10. तकनीकी योग्यता का विकास।

11. देश में समृद्धि।

2.10 खराब औद्योगिक संबंधों के कारण

देश के औद्योगिक संबंध अच्छे नहीं है, हाल के वर्षों में तो स्थिति और बिगड़ी हैं। खराब औद्योगिक संबंधों के लिए निम्नलिखित कारणों को उत्तरदायी ठहराया जा सकता है।

1. सेवायोजकों व श्रमिकों में परस्पर उदासीनता।
2. अपर्याप्त मजदूरी, खराब व अस्वस्थ कार्य की दशाएं।
3. निरन्तर बढ़ती अनुशासनहीनता।
4. पर्यवेक्षकों व प्रबन्धकों का श्रमिकों के साथ खराब व्यवहार।
5. अपर्याप्त कल्याणकारी सुविधाएँ।
6. श्रमसंधों में पारस्परिक शत्रुता, श्रम सन्नियमों का व्यवहार में लागू न होना।
7. सेवानियोजकों द्वारा श्रमिकों की छंटनी, बर्खास्तगी, तालाबंदी तथा श्रमिकों द्वारा हड़ताल करना।
8. देश का सामान्य आर्थिक व राजनीतिक वातावरण।

2.11 अच्छे अथवा स्वस्थ औद्योगिक संबंधों की शर्तों या सुझाव

औद्योगिक शान्ति की स्थापना व उत्पादन वृद्धि हेतु आवश्यक है कि देश में औद्योगिक संबंध अच्छे हों। हड़तालों, प्रदर्शनों, घेरावों, नारेबाजी व कार्य में रूकावट डालने वाले श्रमिकों की अन्य क्रियाओं को हतोत्साहित किया जाना चाहिए। अच्छे औद्योगिक संबंधों के लिए निम्नलिखित प्रयास होने चाहिए।

i. सेवायोजकों को यह मानना चाहिए कि श्रमिक संगठन के सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्यरत दल का महत्वपूर्ण भाग है।

ii. कार्य दशाओं सुविधाओं व अन्य अधिकारों के सम्बन्ध में श्रमिकों के परिवेदनाओं पर समुचित ध्यान देना।

iii. श्रमिकों को उचित मजदूरी एवं कार्य की संतोषप्रद दशा।

iv. सूचना की प्रभावी व्यवस्था होनी चाहिए।

v. सहभागिता के वातावरण की स्थापना की जानी चाहिए।

vi. औद्योगिक विवादों के निपटारे की समुचित व्यवस्था।

vii. श्रमिकों को पर्याप्त सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए।

2.12 श्रम संघ

जैसे-जैसे औद्योगीकरण का समय चक्र आगे बढ़ा विश्व में सर्वत्र श्रम संघों का जन्म होता गया। श्रम संगठनों की स्थापना कार्य करने की दशाओं प्रबन्ध नीतियों एवं आचरणों जननीतियों और सेविवर्गीय संबंधों में सुधार एवं परिवर्तन के उद्देश्यों से हुई। यह संगठन विभिन्न रूपों, ढाँचों और उद्देश्यों को लेकर उदय हुए और कालान्तर में औद्योगिक जगत एवं विशेष रूप से सेविवर्गीय प्रबन्ध में इनका महत्वपूर्ण स्थान बन गया।

सिडनी और बैब के अनुसार - श्रमसंघ मजदूरी अर्जित करने वालों की अपने कार्यजीवन की दशाओं के अनुरक्षण एवं सुधार के उद्देश्यों से बनायी हुई एक सतत् संस्था है।

डेल याडोर के अनुसार - श्रम संघ कर्मचारियों की एक सतत् एवं दीर्घकालीन संस्था है जो कि कर्मचारी सम्बन्धों में अपने सदस्यों के हितों की समृद्धि एवं सुरक्षा के विशेष उद्देश्य से बनायी जाती है और चलाई जाती है।

फिलप्पों के अनुसार - श्रम संघ या व्यापारिक संघ श्रमिकों का एक संगठन है, जो कि सामूहिक कार्यवाही द्वारा अपने सदस्यों के सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक हितों की समृद्धि, सुरक्षा एवं उसमें सुधार के लिए बनाया जाता है।

2.13 उद्देश्य

आजकल श्रम संघों के विभिन्न उद्देश्य एवं कार्य हैं। इन उद्देश्यों की सीमा, क्रान्ति से लेकर नियोक्ता से सहयोग, अपनी सुरक्षा से लेकर कर्मचारियों के सर्वांगीण विकास के लिए रचनात्मक कार्य, और श्रम कल्याण से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कल्याण आन्दोलन तक है। श्रम संघों के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित है --

2.13.1 आर्थिक उद्देश्य -

श्रम संघों का सबसे प्रमुख उद्देश्य श्रमिक वर्गका आर्थिक कल्याण है। इन्हीं उद्देश्यों को लेकर वे अधिक मजदूरी एवं वेतन लाभ, भोजन, बोनस भविष्यनिधि और पेंशन, जीवन बीमा, कार्य की सुरक्षा आदि की मांग करते हैं जिससे श्रमिकों का आर्थिक स्तर सुधरे और वे अच्छी तरह जीवन-यापन कर सके। अपने आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए वे सामूहिक सौदेकारी जैसे अनेकों कार्य करते हैं।

2.13.2 सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक उद्देश्य -

श्रम संघों के सामाजिक और मनोवैज्ञानिक उद्देश्य भी होते हैं, जिससे कि वे श्रमिक वर्ग की मूल मानवीय एवं सामाजिक आवश्यकताओं की भी संतुष्टि करा सके। श्रम संघ की सदस्यता द्वारा सुरक्षा, स्वतंत्रता, शक्ति, विश्वास, वर्ग-समबन्धता, पद प्रतिष्ठा, आत्म अभिव्यक्ति आदि से उनकी सामाजिक एवं मानसिक आवश्यकताओं की संतुष्टि हो जाती है। श्रम संघ श्रमिकों के सामाजिक मिलन का मंच होता है जहाँ सदस्य एक दूसरे से अपने सुख-दुख प्रकट कर सकते हैं, एकता में उन्हें सुरक्षा और शक्ति मिलती है मिलने-जुलने की स्वतंत्रता एवं भावों की अभिव्यक्ति का अवसर मिलता है।

2.13.3 राजनैतिक उद्देश्य -

श्रम संघों का एक राजनैतिक उद्देश्य औद्योगिक संगठनों में प्रजातंत्र की स्थापना है, जिसमें श्रमिक वर्ग प्रजातांत्रिक ढंग से

संगठनों का प्रबंध, नियंत्रण और संचालन कर सके। इसी प्रकार उनका दूसरा राजनैतिक उद्देश्य पूँजीवाद को समूल उखाड़ फेंकना और उसके स्थान पर न्याय है। अतः वे श्रमिकों को संगठिन कर, राजनैतिक सत्ता को प्राप्त कर नीतियों और कानूनों को भी प्रमाणित करने का प्रयास करते हैं।

2.13.4 अन्य उद्देश्य -

श्रम संघों के उद्देश्यों का क्षेत्र आजकल इतना व्यापक हो चुका है कि उनकी गणना के क्षेत्र की सीमा का अनुमान कठिन है। उपर्युक्त उद्देश्यों के अतिरिक्त, श्रमिकों के अनुशासन, परायणता का विकास, प्रबन्ध एवं श्रमिकों के सम्बन्धों में सुधार, औद्योगिक शान्ति की देश और संगठन में स्थापना, श्रमिक वर्ग की शिक्षा, प्रतिष्ठा एवं आत्म सम्मान में वृद्धि, नियोजन के अवसरों में वृद्धि एवं श्रमिकों को उन पदों पर आसीन करना, आदि कुछ अन्य भी उद्देश्य है।

2.14 श्रम संघों के कार्य

श्रम संघ के कार्यों को तीन भागों में विभक्त कर सकते है--

1- संस्थान के अन्दर किये जाने वाले कार्य।

2- संस्थान के बाहर किये जाने वाले कार्य।

3- राजनीतिक कार्य।

2.14.1 संस्थान के अन्दर किये जाने वाले कार्य -

इन कार्यों में श्रमिक के काम की दशाओं को सुधारने, उ्चित वेतन दिलाने, कार्यकुशलता की रक्षा करने, कार्य के कष्टों का नियमन कराने, सवेतन पद बनाए रखने आदि शामिल होते हैं। साथ ही श्रम संघ औद्योगिक विवादों के सम्बन्ध में सलाह देने का भी कार्य करते हैं। कार्य समितियों, समझौता बोर्ड तथा अन्य प्रकार की समितियों में श्रम द्वारा अधिकृत व्यक्ति श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करते हैं। श्रमिकों को रोजगार की स्थिरता, छटनी पर प्रतिबन्ध, कामबन्दी

पर प्रतिबन्ध आदि की दिशा में श्रम संघों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है।

2.14.2 संस्थान के बाहर किये जाने वाले कार्य -

इनमें श्रमिकों के जीवन स्तर को उन्नत बनाने के कार्य आते हैं। जैसे श्रमिकों के बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था, श्रम कल्याण की व्यवस्था, मनोरंजन, कुरीतियों के उन्मूलन, मकान निर्माण, आर्थिक सहायता पहुँचाना आदि।

2.14.3 राजनीतिक कार्य -

श्रम संघ राजनीतिक क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। श्रमसंघ के सदस्य चुनावों में भाग लेते हैं और इसके लिए अपने कोषों का इस्तेमाल कर सकते हैं। श्रमिकों के हितार्थ राजनीतिक सभाएँ भी करते रहते हैं।

वर्तमान मे भारत में 55 हजार पंजीकृत श्रमसंघ है जिनकी सदस्य संख्या 70 लाख से भी अधिक है। इस समय भारत में निम्न प्रमुख केन्द्रीय श्रम संघ कार्य कर रहे हैं-

1- अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस

2- भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस

3- हिन्द मजदूर सभा

4- संयुक्त ट्रेड यूनियन कांग्रेस

5- भारतीय मजदूर संघ

6- सेण्टर ऑफ इण्डियन ट्रेड यूनियन

7- नेशनल लेबर आर्गेनाइजेशन

8- नेशनल फ्रण्ट ऑफ इण्डियन ट्रेड यूनियन

9- ट्रेड यूनियन कांग्रेस कमेटी।

2.15 सारांश

औद्योगिक संबंध का अर्थ है उद्योगों से संबंधित पक्षकारों के

मध्य पारस्परिक संबंध एवं व्यवहार से है। संगठन की सफलता एवं विकास के लिए अच्छे औद्योगिक संबंधों की आवश्यकता होती है। औद्योगिक संबंध गतिशील सामाजिक-आर्थिक प्रक्रिया है। यह पारस्परिक संबंधों में सुधार की प्रक्रिया है जो निरन्तर चलती रहती है। औद्योगिक संबंधों का मुख्य उद्देश्य कर्मचारियों व सेवा नियोजकों के मध्य मधुर संबंधों की स्थापना करना है। यद्यपि औद्योगिक संबंध नियोक्ता, कर्मचारी अथवा श्रमिक एवं प्रबंध के संबंधों से संबंधित होती है परन्तु इसका क्षेत्र इससे कहीं अधिक होता है तथा इसके अन्तर्गत श्रम संबंध और जन संबंध या सामुदायिक संबंध भी सम्मिलित है। औद्योगिक संबंध का प्राथमिक कार्य प्रबंध व श्रमिकों के मध्य मधुर संबंधों की स्थापना करना है। औद्योगिक संबंध मुख्यतः आई0एल0ओ0 द्वारा विकसित सिद्धान्तों पर कार्य करता है। खराब औद्योगिक संबंधों के अनेक कारण विद्यमान हैं जिनमें सेवायोजकों व श्रमिकों के परस्पर उदासीनता, अपर्याप्त कल्याणकारी सुविधाएँ तथा अपर्याप्त मजदूरी, खराब व अस्वस्थ कार्य की दशाएँ आदि सम्मिलित है। श्रमसंघ मजदूरी अर्जित करने वालों की अपने कार्यजीवन की दशाओं के अनुरक्षण एवं सुधार के उद्देश्यों से बनाई हुई एक सतत् संस्था है। श्रमसंधों के आर्थिक, सामाजिक व मनौवैज्ञानिक राजनीतिक तथा अन्य अनेक उद्देश्य होते हैं। इसके कार्यों के अन्तर्गत संस्थान के अन्दर किये जाने वाले, बाहर किये जाने वाले कार्य तथा राजनैतिक कार्य सम्मिलित किये जाते हैं।

2.16 बोध प्रश्न

प्र01 औद्योगिक सम्बन्ध से आप क्या समझते हैं? इसके कार्य एवं सिद्धान्तों का वर्णन करें।

प्र02 औद्योगिक सम्बन्ध के क्षेत्र एवं उद्देश्यों का वर्णन करें।

प्र03 'श्रम संघ' से आप क्या समझते हैं? श्रम संघों द्वारा किये जाने वाले कार्यों का वर्णन करें।

2.17 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. योडर, डेल-''पर्सनेल मैनेजमेन्ट एण्ड इन्डस्ट्रियल रिलेशन्स'' प्रिन्टिक हाल, नई दिल्ली-1980
2. मैक्ग्रेमर डगलस-''द ह्यूमन साइड ऑफ इन्टरप्राइस'', मैक्ग्राहिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क, 1964
3. फिलप्पों एडविन बी0-''पर्सनेल मैनेजमेन्ट, मैक्ग्राहिल, टोक्यो, 1981

इकाई 3 : परिवेदना प्रबन्ध

इकाई की रूपरेखा

3.1 परिचय

3.2 उद्देश्य

3.3 परिभाषाएँ

3.4 परिवेदना के कारण

3.5 परिवेदना निवारण की आवश्यकता

3.6 परिवेदना निवारण के सिद्धान्त

3.7 परिवेदना निवारण प्रक्रिया

3.8 आदर्श परिवेदना निवारण प्रक्रिया

3.9 परिवेदना निवारण प्रक्रिया के लाभ

3.10 सारांश

3.11 बोध प्रश्न

3.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.1 परिचय

कर्मचारी अपनी कार्यक्षमता के साथ कार्य तभी कर सकते हैं जब वे सन्तुष्ट होते हैं। औद्योगिक अशान्ति उत्पादकता को कम करने के साथ-साथ श्रमिकों को भीतर से खोखला कर देती है। कर्मचारियों का यह कथन है कि उनका वेतन कम है, कार्य की अवधि अधिक है, छुट्टी नहीं मिलती, स्थानान्तरण मनमानी तरीके से किया गया, पदोन्नति नहीं की गयी, कार्य की दशायें असन्तोषजनक है, पर्यवेक्षकों का व्यवहार उनके प्रति पक्षपातपूर्ण है, उन्हें गलत रूप से निष्कासित किया गया है, जैसी अनेक शिकायतें, कर्मचारियों की परिवेदनाओं की परिचायक है। जहाँ एक ओर कर्मचारी सेवायोजकों पर लांछन लगाते हैं वहीं दूसरी ओर नियोक्ता कर्मचारियों पर ठीक से कार्य न करने, अनुशासन भंग करने, ग्रुपबाजी करने तथा देर से आने जैसे आरोप लगाते हैं। इस प्रकार चाहे ये परिवेदनाएं वैधानिक हो अथवा

अवैधानिक, वास्तविक हो अथवा काल्पनिक, परन्तु शिकायतें अवश्य ही औद्योगिक विवादों को जन्म देती हैं। इस प्रकार मानसिक अशान्ति बढ़ जाती है और प्रबन्ध तथा कर्मचारी एक दूसरे की आलोचना करते हैं।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सक्षम होंगे --

1. परिवेदना का अर्थ एवं परिभाषाओं को जानने में।
2. परिवेदना के कारण एवं निवारण की आवश्यकता को जानने में
3. परिवेदना निवारण के सिद्धान्तों को जानने में।

4- परिवेदना निवारण प्रक्रिया को जानने में।

3.3 परिभाषायें

पीगर्स एवं मायर्स के अनुसार ''परिवेदना औपचारिक रूप से लिखित असन्तोष है जो संगठन के क्रिया कलाप द्वारा उत्पन्न होता है। शिकायत प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति संगठन के क्रिया-कलाप को अनुचित, अन्यायपूर्ण, गलत एवं असमान समझाता है।''

बीच के अनुसार - ''परिवेदन ऐसे असन्तोष एवं अन्याय की भावना है जो कि एक व्यक्ति अपने रोजगार की स्थिति में अनुभव करता है और जिसके लिए प्रबन्धक का ध्यान आकर्षित किया जाता है।

अतः कहा जा सकता है कि परिवेदना औपचारिक रूप से लिखित में प्रस्तुत किया गया असन्तोष है जो संगठन के सम्बन्धित विषयों से उत्पन्न होता है और जिसे परिवेदना प्रस्तुतकर्ता स्वयं के प्रति अनुचित, गलत, अन्यायपूर्ण एवं असमान सोचता, समझता एवं विश्वास करता है।

3.4 परिवेदना के कारण (Cause of Grievance)

जब कर्मचारियों के हितों एवं अधिकारों का अतिक्रमण किया

जाता है तो वह असन्तोष अनुभव करता है। इसके परिणामस्वरूप परिवाद उपस्थित करता है। साधारणतः यह स्थिति कम्पनी की नीतियों, नियमों एवं व्यवहारों को गलत ढंग से लागू करने के कारण उत्पन्न होती है। कर्मचारी परिवाद निम्न कारणों से होता है-

1. व्यक्तिगत मजदूरी निर्धारण एवं कर्मचारी की उचित मजदूरी के लिए माँग तथा उसका पूरा न किया जाना।
2. कार्य वितरण, अनुशासन एवं अभिप्रेरणा प्रणाली के प्रति रोष।
3. पर्यवेक्षकों द्वारा पक्षपात।
4. वरिष्ठता एवं सेवा अनुबन्ध सम्बन्ध की निष्फलता।
5. वरिष्ठता अधिकार अथवा पदोन्नति क्रम में परिवर्तन।
6. अनुशासन के आधार पर कार्य से निष्कासन या जबरन छुट्टी।
7. अन्य विभागों या पारियों में स्थानान्तरण।
8. सुरक्षा एवं चिकित्सा की दृष्टि से अपर्याप्त प्रावधान।
9. सामूहिक सौदेबाजी के समझौतों का उल्लंघन।
10. समय पर उत्पादन सामग्री की प्राप्ति न होना।
11. अनुचित कार्य की दशाएँ।
12. अविवेकपूर्ण ढंग से कार्य सौंपना।

प्रबन्धक भी व्यक्तिगत रूप में कर्मचारी के विरुद्ध अपनी शिकायत करते हैं। उनकी शिकायत के विभिन्न आरोप निम्न है-

1. अनुशासनहीनता।
2. कार्य की धीमी गति।
3. संविदा पूरा न करना।
4. संघों का सफलतापूर्वक कार्य न करना।
5. संघ के सदस्यों द्वारा प्रबन्धकों पर दबाव डालने की नीति का अपनाया जाना।

6. संगठनों और श्रम संघों के हितों में टकराव और
7. श्रम संघों द्वारा प्रबन्ध पर लगाये गये अवांछित आक्षेप एवं प्रचार।

3.5 परिवेदना निवारण की आवश्यकता

परिवेदना निवारण की आवश्यकता निम्न कारणों से पड़ती है-

1. अधिकतर परिवेदनाएं कर्मचारियों को मुश्किल में डाल देती है जिससे उनका नैतिक बल, उत्पादन तथा सहयोग कम हो जाता है। अतः यह आवश्यक है कि परिवेदनाओं का निवारण तत्काल कर दिया जाय।
2. परिवेदना निवारण प्रक्रिया प्रशासन पर अंकुश लगाती है और प्रबन्धकों को मनमानी करने से रोकती है।
3. कर्मचारियों में निराशा और असन्तोष कम करने तथा उनके अधिकारों की रक्षा करने के लिए परिवेदना निवारण प्रक्रिया आवश्यक होती है।
4. परिवेदना की प्रस्तुति उर्ध्वमुखी सम्प्रेषण है। उच्च प्रबन्धकों को कर्मचारियों की निराशा, समस्या तथा अपेक्षाओं की जानकारी प्राप्त होती है। वे कर्मचारी कल्याण के प्रति जागरूक हो जाते हैं जिससे योजना बनाते समय तथा नीतियाँ निर्धारित करते समय श्रमिक के हितों का हनन नहीं होता।
5. निर्धारित प्रक्रिया कर्मचारी समस्याओं पर विचार करने का अवसर प्रदान करती है जिससे नियम अधिक प्रभावी हो जाते हैं।

3.6 परिवेदना निवारण के सिद्धान्त

माइकेल ज्यूशियस ने परिवेदना निवारण के निम्न चार सिद्धान्त बताये हैं -

i. साक्षात्कार सिद्धान्त।

ii. कर्मचारियों के प्रति प्रबन्धकों की धारणा।

iii. प्रबन्धकों का उत्तरदायित्व।

iv. दीर्घकालीन सिद्धान्त।

i. साक्षात्कार सिद्धान्त (Principal of Interviewing)

अच्छे श्रमिक सम्बन्धों के लिए आवश्यक है कि शिकायतों और परिवेदनाओं को समय रहते हल कर लेना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि प्रबन्धक कर्मचारियों से अधिक निकट रहे। इसके अन्तर्गत प्रबन्धकों को कर्मचारियों से सम्बन्धित बातें पूछती रहनी चाहिए जिससे वे प्रबन्ध को अपने करीब पा सके।

ii. कर्मचारियों के प्रति प्रबन्धकों की धारणा -

प्रबन्धकों को कर्मचारियों की शिकायत या परिवेदना सुनने में रूचि दिखानी चाहिए तथा सद्भावना का परिचय देना चाहिए परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि झूठी एवं मनगढ़न्त बातों पर सरलता से विश्वास न किया जाये। प्रबन्धक को शिकायत के औचित्य का निर्धारण करना चाहिए तथा अपना निर्णय सोच-समझ कर देना चाहिए। एक भी गलत निर्णय प्रबन्धक की प्रतिष्ठा को हानि पहुँचाती है।

iii. प्रबन्धकों का उत्तरदायित्व

प्रत्येक उचित एवं अनुचित निर्णय के लिए प्रबन्धक उत्तरदायी होते हैं। प्रबन्धकों में कर्मचारियों का सद्विश्वास ही औद्योगिक शान्ति को प्रोत्साहित करता है। अतः प्रबन्धकों का उत्तरदायित्व है कि कर्मचारियों में अपना विश्वास स्थापित करें। कर्मचारियों को यह पूर्ण विश्वास होना चाहिए कि प्रबन्धक उनके हित के लिए ही कार्य करेंगे।

iv. दीर्घकालीन सिद्धान्त

प्रबन्धकों को किसी भी निर्णय के पूर्व संगठन के दीर्घकालीन

हित ध्यान में रखना चाहिए। कर्मचारियों की तत्काकालिक प्रसन्नता से कई बार दीर्घकाल मं संगठन को अत्यधिक हानि हो सकती है। एक निर्णय से गलत परम्परा स्थापित हो सकती है।

परिवेदना निवारण का उद्देश्य औद्योगिक शान्ति को प्रोत्साहित करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सम्प्रेषण प्रणाली का उपयोग कर्मचारी से निरन्तर सम्पर्क बनाये रखना, शिकायत के औचित्य का निर्धारण करना तथा दीर्घकालीन हित को ध्यान में रखते हुए उचित निर्णय लेना आवश्यक है।

3.7 परिवेदना निवारण प्रक्रिया

यद्यपि परिवेदना प्रक्रिया परिस्थितियों पर निर्भर करती है, किन्तु फिर भी सामान्यतः निम्नलिखित प्रक्रिया का प्रयोग किया जाता है-

1. एक असंतुष्ट कर्मचारी सर्वप्रथम अपनी परिवेदना निकटस्थ सक्षम अधिकारी को मौखिक रूप से प्रस्तुत करेगा। वह अधिकारी परिवेदना सुनने के उपरान्त 48 घण्टों में अपना जवाब देना।

2. यदि श्रमिक/कर्मचारी उत्तर से असंतुष्ट है या निर्धारित समय सीमा में उसे उत्तर नहीं प्राप्त होता तो वह व्यक्तिगत रूप में या अपने प्रतिनिधि के विभागाध्यक्ष के पास वाद प्रस्तुत करेगा विभागीय अध्यक्ष परिवेदना प्रस्तुत किये जाने के तीन दिन बाद अपना निर्णय देगा। यदि निर्धारित अवधि में निर्णय नहीं दिया जाता है उसका कारण स्पष्ट किया जाना चाहिए।

3. यदि विभागीय अध्यक्ष का उत्तर सन्तोषजनक नहीं है तो श्रमिक यह प्रार्थना कर सकता है कि उसकी परिवेदना समिति के पास अग्रप्रेषित कर दी जाय। यह समिति प्रबन्ध को श्रमिक की प्रार्थना से 7 दिन की अवधि में अपनी सिफारिशें भेज देगी। विलम्ब की स्थिति में परिवदेना समिति कारण स्पष्ट करेगी। प्रबन्धकों द्वारा निर्विवाद रूप से परिवेदना समिति की सिफारिशें लागू की जायेंगी। समिति के सदस्यों में मतभेद

होने की दशा में सभी सूचनाएँ प्रबन्ध के सामने रखे जायेंगे तथा प्रबन्धक का निर्णय अन्तिम होगा।

4. प्रबन्धक द्वारा निर्धारित समय में अपना निर्णय नहीं दे पाने अथवा निर्णय असन्तोषजनक होने की स्थिति में श्रमिक पुनरावलोकन के लिए प्रार्थना कर सकता है। इस प्रकार की अपील में श्रम संघ के प्रतिनिधि भी भाग ले सकते हैं। प्रबन्धकों की ओर से इस पुनरावलोकन अपील पर विचार कर एक सप्ताह में निर्णय दिये जाने की व्यवस्था है।

5. इसके पश्चात् भी यदि सहमति सम्भव नहीं है तो श्रम संघ तथा प्रबन्धक मिलकर मामले को ऐच्छिक पंचनिर्णय के लिए भेज सकते हैं। यह अग्रपेषण प्रबन्धक के निर्णय प्राप्त होने के उपरान्त 7 दिन के भीतर किया जा सकता है।

6. जहाँ इस प्रकार पर श्रमिक द्वारा परिवेदनाएं सुलझाने हेतु कार्यवाही की जाती है, उसमें समझौता संयन्त्र तब तक हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक सभी साधनों का उपयोग करने पर भी सफलता प्राप्त नहीं हो सकें।

7. यदि प्रबन्धक द्वारा दिये गये निर्णय के परिणामस्वरूप कोई परिवेदना उत्पन्न होती है तो श्रमिक को पहले आदेश का पालन करना होगा तथा वह बाद में परिवेदना प्रस्तुत करेगा। यदि आदेश निकलने तथा लागू होने में समयान्तराल है तो परिवेदना तुरन्त प्रस्तुत की जा सकती है, किन्तु फिर भी श्रमिक को आदेश का पालन तो करना ही पड़ेगा चाहे परिवेदना निवारण प्रक्रिया के सभी चरण समाप्त नहीं हुए हों।

8. परिवेदना समिति में श्रमिक प्रतिनिधि जाँच पड़ताल सम्बन्धी किसी भी पत्र/पत्रावली को देख सकता है। प्रबन्धक का प्रतिनिधि ऐसी किसी सूचना अथवा प्रमाण को देने से मना कर सकता है कि जिसे वह गोपनीय समझना है। ऐसे गोपनीय प्रमाणों का प्रयोग निवारण प्रक्रिया के अन्तर्गत श्रमिक के विरुद्ध नहीं किया जायेगा।

9. एक चरण से दूसरे चरण पर अपील की दशा में समयावधि

का ध्यान रखना आवश्यक है। इस उद्देश्य से असंतुष्ट श्रमिक 72 घण्टों में उच्चचरण पर अपील कर सकता है।

10. अपील का समय निर्धारित करने में किसी भी स्तर पर छुट्टी का दिन सम्मिलित नहीं किया जायेगा।

11. परिवेदना निवारण प्रक्रिया को सुचारू रूप से चलाने के लिए प्रबन्धक लिपिक वर्ग तथा कर्मचारियों की व्यवस्था करेंगे।

12. यदि किसी श्रमिक की परिवेदना निवारण प्रक्रिया के अन्तर्गत बुलाये जाने पर कार्य को छोड़कर जाना पड़ता है तो उसे अपने अधिकारी से पूर्व अनुमति लेना आवश्यक है। इसमें श्रमिक को हानि न हो इसका ध्यान रखना आवश्यक है।

13. परिवेदना निवारण प्रक्रिया में कोई ऐसा व्यक्ति प्रबन्धकों द्वारा लगाया गया है जिसके विरुद्ध शिकायत है तो श्रमिक अपना मामला विभागीय अध्यक्ष. के पास ले जा सकता है।

14. यदि किसी श्रमिक को निष्कासित करने अथवा पदमुक्त करने के निर्णय को लेकर कोई परिवेदना उत्पन्न होती है तो उपर्युक्त प्रक्रिया लागू नहीं होगी। उस दशा में निष्कासित/पदमुक्त श्रमिक या तो पदमुक्त करने वाले अधिकारी के पास या किसी वरिष्ठ अधिकारी के पास अपील कर सकता है जो प्रबन्धक द्वारा मनोनीत किया गया हो। यह कार्य आदेश प्राप्ति से एक सप्ताह के भीतर किया जा सकता है।

3.7 आदर्श परिवेदना निवारण प्रक्रिया

आदर्श परिवेदना निवारण प्रक्रिया की व्यवस्था श्रमिकों को सर्वत्र एक जैसा न्याय मिलने के उद्देश्य से की गई है। इस प्रक्रिया का प्रशासन चलाने के लिए प्रत्येक इकाई में यह व्यवस्था की जाती है कि एक परिवेदना निवारण संयत्र लागू किया जाय। परिवाद निवारण प्रक्रिया का गठन करने के लिए प्रत्येक विभाग से प्रतिनिधि चयनित होते हैं।

प्रत्येक पारी के लिए अलग-अलग प्रतिनिधि होते हैं जो कम

से कम एक वर्ष की अवधि के लिए कार्य करते हैं। यदि संघ द्वारा सर्वसम्मत से चुने गये प्रतिनिधियों की सूची प्रबन्धकों को दे दी गई है तो चयन करने की अवश्यकता नहीं रहती है। प्रत्येक विभाग के लिए प्रबन्धकों की ओर से व्यक्ति मनोनीत कर दिये जाते हैं। दो या तीन विभागीय श्रम प्रतिनिधि एवं दो या तीन विभागाध्यक्ष मिलकर परिवेदना समिति का निर्माण करते हैं। सेवा मुक्ति आदि मामलों में अपील के लिए प्रबन्धक द्वारा सक्षम अधिकारी का मनोनयन कर दिया जाता है।

परिवेदना समिति

शिकायत अथवा परिवेदना प्रक्रिया समस्या निवारण

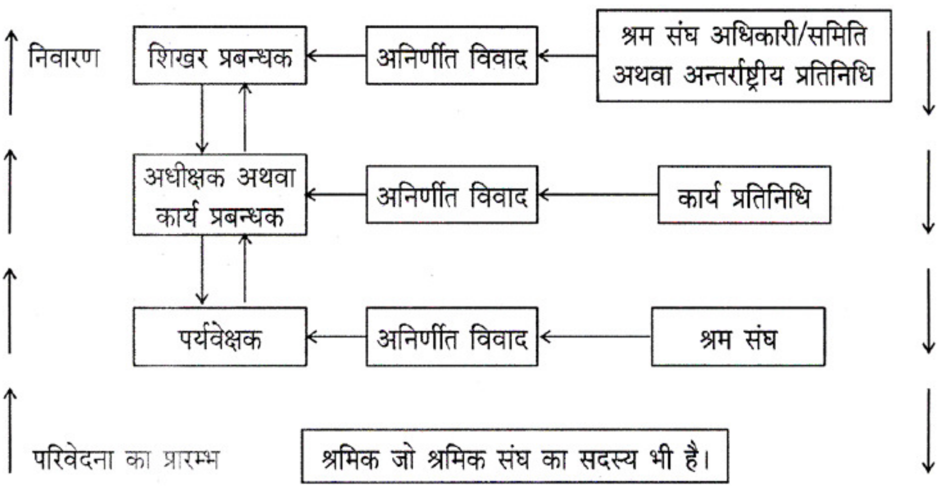

3.9 परिवेदना निवारण प्रक्रिया के लाभ

परिवेदना निवारण प्रक्रिया से सामान्य विवाद बड़ा रूप नहीं ले पाते हैं। इस प्रक्रिया के निम्नलिखित लाभ होते हैं-

1. इस प्रक्रिया में प्रत्येक कर्मचारी को ऐसी सुविधा उपलब्ध होती है जिसके द्वारा वह अपनी शिकायत प्रस्तुत कर अपना असन्तोष व्यक्त कर सकता है।
2. पूर्व निर्धारित प्रक्रिया द्वारा प्रत्येक परिवेदना को अच्छी तरह समझा और हल किया जा सकता है।
3. यह कर्मचारियों को अपनी भावनाएँ प्रस्तुत करने का उपकरण

तैयार करता है।

4. यथा शीघ्र परिवेदनाओं को सुलझाने का महत्वपूर्ण साधन होता है।

5. प्रबन्ध और श्रम संघ के बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बनाने तथा अन्य कई प्रकार की समस्याओं का हल निकालने का उचित माध्यम है।

6. कर्मचारियों को अधिक संतुष्ट रखने का साधन होता है।

7. परिवाद सुलझाने में एक रूपता दिखाती है।

8. कर्मचारियों में यह आत्मविश्वास उत्पन्न करता है कि उनकी शिकायत पर विशेष ध्यान दिया जायेगा तथा वह प्रबन्धकों से न्याय प्राप्त कर सकता है।

9. नियमों को निर्णय का आधार बनाने के लिए निर्धारित प्रणाली उपलब्ध कराता है।

10. इस प्रक्रिया के अनुसार परिवेदना सुलझाने में किसी प्रकार का व्यक्तिगत वैमनस्य नहीं हो सकता है।

3.10 सारांश

संतुष्ट कर्मचारी ही अपनी कार्यक्षमता के अनुसार कार्य कर सकते हैं। औद्योगिक अशान्ति श्रमिकों को इस तरह से कमजोर कर देती है तथा उत्पादकता को कम करती है। परिवेदना औपचारिक रूप से लिखित में प्रस्तुत किया गया असन्तोष है जो संगठन के सम्बन्धित विषयों से उत्पन्न होता है। इसमें परिवेदना प्रस्तुतकर्ता स्वयं के प्रति अनुचित गलत, अन्यायपूर्ण एवं असमान सोचता समझता एवं विश्वास करता है। परिवेदना के अनेक कारण पाये जाते हैं जिनमें मजदूरी की मांग तथा उनका पूरा न किया जाना, कार्य वितरण, अनुशासन एवं अभिप्रेरणा प्रणाली के प्रति रोष तथा पर्यवेक्षकों द्वारा पक्षपात आदि को सम्मिलित किया जा सकता है। परिवेदना का निवारण अत्यन्त आवश्यक होता है क्योंकि ये परिवेदनाएँ कर्मचारियों को मुश्किल में डाल देती हैं। यह प्रशासन पर अंकुश

लगाकर मनमानी को रोकती है। परिवेदना निवारण के प्रमुख सिद्धान्तों में साक्षात्कार सिद्धान्त, कर्मचारियों के प्रति प्रबंधकों की धारणा, प्रबंधकों का उत्तरदायित्व तथा दीर्घकालीन सिद्धान्त सम्मिलित किये जाते हैं। परिवेदना निवारण प्रक्रिया वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा संगठनों में व्याप्त परिवेदनाओं को दूर किया जाता है तथा संगठनों को सुचारू रूप से अपनी गतिविधियों को चलाने के लिए प्रोत्साहित करता है। आदर्श परिवेदना निवारण प्रक्रिया की व्यवस्था श्रमिकों को सर्वत्र एक जैसा न्याय मिलने के उद्देश्य से की गई है। परिवेदना निवारण प्रक्रिया के अनेक लाभ होते हैं। इसके द्वारा कर्मचारी अपनी भावनाएँ प्रस्तुत करता है। इस प्रक्रिया में प्रत्येक कर्मचारी को ऐसी सुविधा उपलब्ध होती है कि जिसके द्वारा वह अपनी शिकायत प्रस्तुत कर अपना असंतोष व्यक्त कर सकता है। इस प्रकार यह कर्मचारियों को संतुष्ट रखने का साधन है।

3.11 बोध प्रश्न

प्र01 परिवेदना निवारण से आप क्या समझते हैं? इसके प्रमुख कारणों को बताइये।

प्र02 परिवेदना निवारण के सिद्धान्तों का वर्णन करें।

प्र03 परिवेदना निवारण प्रक्रिया का वर्णन करें।

प्र04 आदर्श परिवेदना निवारण प्रक्रिया को बताइये।

3.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

1 योडर, डेल-''पर्सनेल मैनेजमेन्ट एण्ड इन्डस्ट्रियल रिलेशन्स'' प्रिन्टिक हाल, नई दिल्ली-1980

2 मैक्ग्रेमर डगलस - ''द ह्यूमन साइड आफ इन्टरप्राइस'' मैक्ग्राहिल बुक कम्पनी न्यूयार्क 1964

3. फिलप्पों एडविन बी0-''पर्सनेल मैनेजमेन्ट मैक्ग्राहिल टोक्यो 1981

इकाई 4 : परिवेदना प्रबन्ध

इकाई की रूपरेखा

4.1 परिचय

4.2 उद्देश्य

4.3 कर्मचारी सशक्तिकरण

4.4 श्रमिक शिक्षा

4.5 श्रमिक शिक्षा के उद्देश्य

4.6 भारत में श्रमिक शिक्षा

4.7 श्रमिक शिक्षा के विकास में बाधाएं

4.8 प्रशिक्षण

4.9 प्रशिक्षण के उद्देश्य

4.10 भारत में कारीगर प्रशिक्षण योजना का विकास

4.11 अन्य प्रशिक्षण कार्यक्रम

4.12 सारांश

413 बोध प्रश्न

4.14 सन्दर्भ

4.1 परिचय

सशक्तिकरण ने विकास के उच्च आदर्शों की स्थापना की है जिसने मानव जीवन को सुखपूर्ण एवं खुशहाल बनाया है। कर्मचारी सशक्तिकरण संगठनों में कार्य कर रहे कर्मचारियों को उनके कार्यों एवं उत्तरदायित्वों का बोध कराने के साथ-साथ उनके अधिकारों का बोध कराता है। इस प्रकार यह एक तरफ कर्मचारियों की क्षमता एवं कुशतला में वृद्धि करता है, वही दूसरी तरफ किसी भी तरह के अन्याय के खिलाफ आवाज बुलन्द करता है। यह कर्मचारियों को शिक्षण एवं प्रशिक्षण के माध्यम से कर्मचारियों के ज्ञान एवं कौशल में वृद्धि करता है तथा भविष्य की चुनौतियों का सामना करन के

योग्य बनाता है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सक्षम होंगे --

1. कर्मचारी सशक्तिकरण के अर्थ को जानने में।
2. कर्मचारी शिक्षा की आवश्यकता एवं उद्देश्य समझने में।
3. कर्मचारी प्रशिक्षण के महत्व को जानने में।
4- प्रशिक्षण कार्यक्रमों को जानने में।

4.3 कर्मचारी सशक्तिकरण

कर्मचारी सशक्तिकरण औद्योगिक संगठनों में कार्य कर रहे श्रमिकों की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक विकास को सुनिश्चित करने की प्रक्रिया है। इसके द्वारा श्रमिकों का चतुर्मुख विकास होता है जिससे वे अपने आपको किसी भी दृष्टि से हीन न महसूस करे। इसमें श्रमिकों के न केवल कौशल एवं क्षमता का विकास किया जाता है वरन् उसके आत्मबल को भी विकसित करने का प्रयत्न किया जाता है। सशक्तिकरण द्वारा कर्मचारी अधिक विश्वास पूर्ण ढंग से अपने कार्यों को सम्पादित कर पाते हैं, एवं राष्ट्र के सम्पूर्ण विकास में योगदान करने में सक्षम हो पाते हैं।

कर्मचारी सशक्तिकरण के लिए आवश्यक है कि प्रबन्धक एवं कर्मचारी समर्पण भाव के साथ तथा नियोजित तरीके से इसके लिए कार्य करें। बहुत कम ऐसे संस्थान हैं जो इस सिद्धान्त को साथ कार्य करते हैं। इसलिए इस क्षेत्र में अधिक सफलता नहीं मिल सकी है। इसका कारण संस्थान के प्रबन्ध तन्त्र के मस्तिष्क में यह भ्रान्ति पायी जाती है कि सशक्तिकरण एक दिन अथवा एक बार में की जाने वाली प्रक्रिया है। यह एक सतत् प्रक्रिया है। सशक्तिकरण की सर्वप्रमुख आवश्यकता श्रमिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण होती है। इसके अतिरिक्त सामाजिक सुरक्षा भी श्रमिकों के शक्तिकरण के लिए उत्तरदायी है।

4.4 श्रमिक शिक्षा -

फ्लोरेन्स पीटरसन के शब्दों में ''श्रमिक शिक्षा विशिष्ट प्रकार की प्रौढ़ शिक्षा है, जो श्रमजीवियों को श्रमिक संगठन के सदस्य, उपभोक्ता तथा नागरिक के रूप में उनके स्तर के अनुकूल अधिक एवं उत्तरदायित्वों की जानकारी प्रदान करती है।'' श्रमिक शिक्षा का सार यह है कि यह श्रमिक को उसकी समस्याएँ व्यक्ति के रूप में नहीं अपितु सामाजिक सदस्य के रूप में सुलझाने में सहायक करती है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार - श्रमिक शिक्षा अपनी परिधि में श्रमिक की विभिन्न शैक्षणिक आवश्यकताओं को समेटे होती है, जैसे-वैयक्तिक विकास हेतु एक 'व्यक्ति' के रूप में शिक्षा की आवश्यकता कुशलता एवं उन्नति के लिए एक श्रमिक के रूप में शिक्षा की आवश्यकता सुखी एवं एकीकृत सामाजिक जीवन के लिए एक 'नागरिक' के रूप में शिक्षा की आवश्यकता।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि श्रमिक शिक्षा का श्रमिक के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। इससे उनकी न केवल व्यक्तिगत समस्यायें दूर होती हैं वरन् उनकी कार्य से सम्बन्धित समस्यायें भी दूर हो जाती है तथा वे अपना सम्पूर्ण विकास कर देश एवं समाज की सेवा करने में सक्षम हो पाते हैं।

4.5 श्रमिक शिक्षा के उद्देश्य निम्न हैं

1. उचित प्रशिक्षण प्राप्त और प्रबुद्ध श्रमिकों द्वारा सुदृढ़ एवं प्रभावपूर्ण श्रम संघों का विकास।
2. श्रम संघों के संगठन एवं प्रबन्ध में जनतनन्त्रीय परम्पराओं और पद्धतियों को प्रोत्साहन।
3. श्रम संगठनों के लिए श्रमिकों में से ही नेता तैयार करना।
4. संगठित श्रमिकों को जनतंत्रीय समाज में उचित स्थान पाने और सामाजिक - आर्थिक कार्य एवं उत्तरदायित्व प्रभावशाली

ढंग से पूरा करने में समर्थ बनाना।

5. श्रमिकों को अपने आर्थिक वातावरण की समस्याओं से परिचित कराना।

6. संघ के सदस्य, कारखाने के कर्मचारी और देश के नागरिक के रूप में श्रमिकों को अपने विशिष्ट अधिकारों और उत्तरदायित्वों की जानकारी कराना।

4.6 भारत में श्रमिक शिक्षा

भारत में श्रमिक शिक्षा का कार्यक्रम श्रम कल्याण कार्यों के अन्तर्गत सरकार, सेवायोजक एवं श्रम संघ द्वारा कुछ वर्ष पूर्व तक चलाया जाता था। 1957 में भारत सरकार ने फोर्ड फाउण्डेशन के सहयोग से विशेषज्ञों का दल श्रमिक-शिक्षा कार्यक्रम पर आवश्यक सलाह देने के लिए आमन्त्रित किया था। इस दल की सिफारिशों के आधार पर श्रम शिक्षा योजना के प्रशासन हेतु सरकार ने 1958 में केन्द्रीय श्रमिक-शिक्षा बोर्ड स्थापित किया। बोर्ड का प्रधान कार्यालय नागपुर में है। बोर्ड की संगठनात्मक व्यवस्था के अन्तर्गत मुख्य कार्यालय के अधीन क्षेत्रीय केन्द्र, उपक्षेत्रीय केन्द्र तथा संस्थान स्तरीय कक्षाएं आती हैं। मार्च 1970 में बोर्ड की एक की एक प्रशिक्षण शाखा स्थापित की गई जिसका नाम 'श्रमिक शिक्षा का भारतीय संस्थान है'।

4.7 श्रमिक शिक्षा के विकास में मुख्य बाधाएं

भारत में श्रमिक शिक्षा के विकास और विस्तार में आनेवाली प्रमुख बाधाएं निम्नलिखित हैं-

1. प्रवासीपन और श्रमिकावर्त -

औद्योगिक केन्द्रों में ज्यादातर श्रमिक ग्रामीण क्षेत्रों से आते हैं जो अपने गाँवों से सम्बन्ध बनाये रखते हैं एवं मौका मिलते ही गाँवों को लौट जाते हैं। इसके अतिरिक्त कारखानों के कठोर अनुशासन से

घबराकर एवं ग्रामीण जीवन के साथ अपने लगाव के कारण श्रमिक एक कारखाने से दूसरे कारखाने में भी आते जाते रहते हैं जिसके कारण श्रमिक शिक्षा में रूकावट आती है।

2. साक्षरता की धीमी प्रगति

नियोजन काल में साक्षरता की धीमी प्रगति श्रमिक शिक्षा के विकास में एक बड़ी रूकावट है। अशिक्षित श्रमिक शिक्षा के महत्व को नहीं सनझते हैं।

3. श्रम संघों का पिछड़ापन -

भारत में श्रम संघ प्रशिक्षित एवं अनुभवी कार्यकर्ताओं तथा आवश्यक वित्तीय साधनों के मामले में पिछड़े हैं। अतः उनके लिए श्रमिक शिक्षा की व्यवस्था कर पाना बहुत कठिन है जबकि अन्य देशों में शिक्षा देने का कार्य विशेष रूप से उनके संगठनों द्वारा किया जाता है।

4. सेवायोजकों का असहयोग

सेवायोजकों ने श्रमिक शिक्षा कार्यक्रम के विकास में सहयोग नहीं दिया है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जब किसी सेवायोजक ने चयनित श्रमिकों को सेवा मुक्त करने की स्थानीय कमेटी की प्रार्थना मानने से इन्कार कर दिया या इकाई स्तर पर कक्षाएँ आरम्भ करने की सुविधाएं प्रदान नहीं की।

5. प्रेरणा की समस्या

भारत में अधिकांश औद्योगिक श्रमिक अशिक्षित एवं भाग्यवादी हैं। उन्हें यह विश्वास दिलाना बहुत कठिन है कि उनकी प्रगति सम्भव है तथा उन्हें कठोर परिश्रम का लाभ अवश्य मिलेगा।

4.8 प्रशिक्षण

प्रशिक्षित एवं कुशल श्रम का निर्माण किये बिना मजबूत औद्योगिक आधार का निर्माण सम्भव नहीं है विज्ञापन एवं शिल्पकला के विकास उत्पादन की आधुनिक तकनीक एवं विवेकीकरण कार्यक्रम

के विस्तार के साथ-साथ कुशल एवं प्रशिक्षित श्रमिकों की आवश्यकता बढ़ती जाती है। गैर प्रशिक्षित श्रम उद्योग के उद्देश्य की पूर्ति में सीमित अंशदान ही कर सकता है। इस प्रकार प्रशिक्षण उद्योगों के लिए अति आवश्यक है।

4.9 प्रशिक्षण के उद्देश्य

प्रशिक्षण का मुख्य उद्देश्य श्रमिक के वर्तमान कार्य के कुशल निष्पादन हेतु तैयार करना है। इसके अतिरिक्त नये कार्यों, नये संयत्रों, नई तकनीक और पदोन्नति के लिए तैयार करना। प्रशिक्षण कार्यक्रम श्रमिकों में प्रभावी कार्य आदतें एवं कार्य पद्धतियाँ विकसित करने कार्य निष्पादन सुधारने, माल की बर्बादी, दुर्घटनायें तथा अनावश्यक कार्य घटाने, उत्पादन की गुणात्मक उन्नति तथा श्रमिकों का पारिश्रमिक बढ़ाने का महत्वपूर्ण समाधान है। प्रबन्ध के लिए प्रशिक्षण का अर्थ सुधरा हुए उत्पाद ही नहीं होता, अपितु स्वस्थ औद्योगिक सम्बन्धों हेतु क्षमताओं का विकास भी होता है। प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रबन्धकों एवं श्रमिकों को संगठनात्मक परिवर्तनों तथा उद्देश्यों को समझाने तथा नए सामाजिक-आर्थिक वातावरण का मूल्यांकन करने की प्रेरणा देते हैं।

4.10 भारत में कारीगर प्रशिक्षण योजना का विकास

भारत में सबसे पहली प्रशिक्षण योजना द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान शुरू की गई। यह योजना रोजगार कार्यालयों के निरीक्षण के अधीन थी। इसका उद्देश्य युद्ध के लिए प्रशिक्षित तकनीशियनों की पूर्ति करना था। युद्ध की समाप्ति पर यह योजना भूतपूर्व सैनिकों एवं विस्थापितों को विभिन्न व्यवसायों का प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से चालू रखी गई। मार्च 1950 में इस योजना के स्थान पर 'व्यस्कों की प्रशिक्षण योजना' चालू की गई।

1954 में इस योजना को पुनर्गठित किया गया एवं इसे 'कारीगर प्रशिक्षण योजना' (Crafts Training Scheme) संज्ञा दी

गई। इस योजना में प्रशिक्षण के व्यावहारिक पहलू पर अधिक बल डाला गया। इसके अन्तर्गत देश के विभिन्न संस्थानों पर औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान खोले गये जिनमें निःशुल्क प्रशिक्षण दिया जाता है। उद्योग धन्धों की आवश्यकतानुसार प्रशिक्षण का पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया। 'राष्ट्रीय व्यवसाय प्रमाण पत्र बोर्ड' इन संस्थानों में परीक्षाओं का संचालन तथा डिप्लोमा प्रदान करता है। प्रशिक्षणार्थियों को उनके रुझान की परख के आधार पर चयनित किया जाता है। प्रशिक्षण सम्बन्धी नीति के निर्धारण में परामर्श देने तथा विभिन्न स्तरों पर एकता लाने के लिए 'राष्ट्रीय परिषद्' की स्थापना की गई है।

4.11 अन्य प्रशिक्षण कार्यक्रम

द्वितीय पंचवर्षीय योजना तथा उसके पश्चात् भारत में प्रशिक्षण योजनाएं आरम्भ की गई जिनका संक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित है।

1. राष्ट्रीय शिक्षुता प्रशिक्षण योजना

यह योजना द्वितीय पंचवर्षीय योजना में आरम्भ की गई। इस योजना को अनिवार्य रूप प्रदान करने के लिए 1961 में शिक्षुता अधिनियम पास किया गया। अधिनियम द्वारा कुछ उद्योगों में सभी सेवायोजकों के लिए निर्धारित अनुपात में निश्चित उद्योग धन्धों में अप्रन्टिस नियुक्त करना अनिवार्य किया गया। इसमें बुनियादी प्रशिक्षण का साथ-साथ कार्य प्रशिक्षण भी दिया जाता है। मई 1973 में अधिनियम को संशोधित कर इसमें स्नातक इन्जीनियरों और डिप्लोमा धारकों को भी सम्मिलित किया गया।

2. औद्योगिक श्रमिकों के लिए प्रशिक्षण योजना

द्वितीय योजनावधि में श्रमिकों की सैद्धान्तिक जानकारी बढ़ाने के उद्देश्य से एक प्रयोग के तौर पर केन्द्रीय प्रशिक्षण संस्थानों में सांयकालीन कक्षाएं चालू की गई। योजना की सफलता एवं इससे प्राप्त अनुभवों के आधार पर योजना का पुनर्गठन किया गया है।

आज अनेक प्रशिक्षण संस्थान औद्योगिक श्रमिकों के लिये सांयकालिन कक्षाएं चल रहे हैं।

3. प्रशिक्षकों के लिए प्रशिक्षण योजना

प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु चुम्बई, कोलकाता, हैदराबाद, कानपुर, लुधियाना, मद्रास और नई दिल्ली में 'केन्द्रीय प्रशिक्षण संस्थान' खोल गये हैं। नई दिल्ली का संस्थान केवल स्त्री शिक्षकों के लिए है।

4. सुपरवाइजरों के लिए प्रशिक्षण योजना

यह योजना जून 1971 में पश्चिमी जर्मनी के सहयोग से बंगलौर में स्थापित ''फोरमैन प्रशिक्षण संस्थान'' द्वारा चली जा रही है। इस योजना को सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र की संस्थाओं में लागू करने के उद्देश्य से पुनर्गठित किया गया है।

5. उच्च व्यवसायिक प्रशिक्षण योजना

भारत सरकार ने 'संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम के सहयोग से 1971 में मद्रास में उच्च प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की। यह औद्योगिक श्रमिकों और तकनीशियनों को विशिष्ट क्षेत्रों में निपुणता बढ़ाने के लिए प्रशिक्षित करता है। यह योजना मद्रास के अतिरिक्त मुम्बई, कोलकाता हैदराबाद, कानपुर और लुधियाना स्थित केन्द्रीय प्रशिक्षण संस्थानों तथा बंगलौर, बड़ोदरा, धनबाद, दुर्गापुर, फरीदाबाद, नवलपुर, गौहाटी, जम्मू जोधपुर, कोलोमेसेरी, मेरठ, पुणे, पटियाला, विशाखापटनम और रायबरेली में भी चलाई जा रही है। सम्पूर्ण देश के लिए मद्रास का उच्च प्रशिक्षण संस्थान शीर्ष संस्था के रूप में कार्य करा है।

6. व्यावसायिक प्रशिक्षण अनुसंधान

पश्चिमी जर्मनी के सहयोग से 1970 में भारत सरकार ने कोलकाता में 'केन्द्रीय और राज्य सरकारों तथा उद्योगों के अधिकारियों

एवं स्टाफ का प्रशिक्षण तकनीकों मे शोधकार्य भी करता है। 1964 में नई दिल्ली में स्थापित 'श्रम अध्ययन' के भारतीय संस्थान में औद्योगिक सम्बन्ध कार्मिक प्रबन्ध, श्रम सन्नियम आदि के बारे में प्रशिक्षण दिया जाता है।

7. अन्य योजनाएं

नई दिल्ली में 1955 में 'औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र' की स्थापनी की गई जो महिलाओं को कटाई, सिलाई, कढ़ाई और बुनाई के कार्यों में प्रशिक्षण देता है। इस केन्द्र में 1977 में 'राष्ट्रीय व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान' का रूप दे दिया गया। मुम्बई और बंगलौर में महिलाओं के लिए प्रशिक्षण संस्थाएं स्थापित की गई। नाविकों एवं मोची कर्मचारियों के लिए भी प्रशिक्षण योजनाएँ लागू की गई। सामुदायिक विकास एवं सहकारिता मन्त्रालय द्वारा ग्रामीण श्रमिकों को व्यवसाय की ट्रेनिंग देने की योजनाएं लागू की गई है।

4.12 सारांश

श्रमिकों की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विकास को सुनिश्चित करने की प्रक्रिया कर्मचारी सशक्तिकरण के नाम से जानी जाती है। इसके द्वारा श्रमिकों का सर्वांगीण विकास होता है। जिससे वे अपने आपको किसी भी दृष्टि से हीन न महसूस करे। इसके द्वारा श्रमिकों के आत्मबल को विकसित किया जाता है। इसके लिए आवश्यक है कि कर्मचारी समर्पण भाव के साथ नियोजित तरीके से इसके लिए कार्य करे। वह एक सतत् प्रक्रिया है जो अनवरत चलती रहती है। कर्मचारी सशक्तिकरण के अन्तर्गत शिक्षा एवं प्रशिक्षण को प्रमुख रूप से सम्मिलित किया जाता है। श्रमिक शिक्षा एक प्रकार की प्रौढ़ शिक्षा है जो कि श्रम जीवियों को श्रमिक संगठन के सदस्य उपभोक्ता तथा नागरिक के रूप में स्तर के अनुकूल अधिक एवं उत्तरदायित्वों की जानकारी प्रदान करती है। यह शिक्षा श्रमिक को उसकी समस्याएं व्यक्ति के रूप में नहीं अपितु एक सामाजिक सदस्य के रूप में सुलझाने में सहायता करती है।

प्रशिक्षण का मुख्य उद्देश्य श्रमिक को वर्तमान कार्य के कुशल निष्पादन हेतु तैयार करना है। यह नए कार्यों, नए संयत्रों, नई तकनीक और पदोन्नति के लिए श्रमिकों को तैयार करता है। प्रशिक्षण कार्यक्रम के द्वारा कार्य पद्धतियों का विकास, कार्य निष्पादन सुधारने, माल की बर्बादी रोकने दुर्घटनाएं तथा अनावश्यक कार्य घटाने, उत्पादन की गुणवत्ता तथा श्रमिकों का पारिश्रमिक बढ़ाने में महत्वपूर्ण समाधान है।

4.13 बोध प्रश्न

प्र01 श्रमिक शिक्षा से क्या समझते हैं? भारत में श्रमिक शिक्षा की मुख्य बाधाओं का वर्णन करें।

प्र02 प्रशिक्षण के उद्देश्यों का वर्णन करे तथा प्रमुख प्रसिक्षण योजनाओं के बारे में बतायें।

प्र03 कर्मचारी सशक्तिकरण के आवश्यक तथ्यों का वर्णन करें।

3.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

1 योडर, डेल-''पर्सनेल मैनेजमेन्ट एण्ड इन्डस्ट्रियल रिलेशन्स'' प्रिन्टिक हाल, नई दिल्ली-1980

2 मैक्ग्रेमर डगलस - ''द ह्यूमन साइड आफ इन्टरप्राइस'' मैक्ग्राहिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क, 1964

3. फिलप्पों एडविन बी0-''पर्सनेल मैनेजमेन्ट, मैक्ग्राहिल, टोक्यो, 1981

इकाई 5 : श्रमिक सहभागिता

इकाई की रूपरेखा

5.1 परिचय

5.2 उद्देश्य

5.3 प्रबंध में श्रमिकों का भाग

5.4 प्रबन्ध में कर्मचारी सहभागिता के उद्देश्य

5.4.1 आर्थिक दृष्टिकोण से

5.4.2 मनोवैज्ञानिक दृष्टि से

5.4.3 सामाजिक दृष्टि से

5.5 प्रबन्ध में सहभागिता के चरण

5.5.1 सूचना सहभागिता

5.5.2 परामर्श सहभागिता

5.5.3 साहचर्य सहभागिता

5.5.4 प्रशासकीय सहभागिता

5.5.5 निर्णयात्मक सहभागिता

5.6 श्रमिक सहभागिता के लाभ

5.6.1 पारस्परिक सद्भाव की स्थापना

5.6.2 उत्पादकता एवं उत्पादन में वृद्धि

5.6.3 औद्योगिक शान्ति में सहायक

5.6.4 विवेकीकरण एवं वैज्ञानिक प्रबन्ध में सहायक

5.6.5 औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना

5.7 सारांश

5.8 बोध प्रश्न

5.9 सन्दर्भ

5.1 परिचय

औद्योगिक सम्बन्धों को सौहार्दपूर्ण बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि कर्मचारी सहभागिता को बढ़ाया जाय। कर्मचारी

सहभागिता द्वारा संगठनों को अनेक लाभ होत हैं तथा श्रमिकों का मनोबल बढ़ता है जिससे वे कार्यों को अधिक कुशलतापूर्वक करते हैं। कर्मचारी सहभागिता औद्योगिक शान्ति को बढ़ाती है तथा उत्पादकता एवं विवेकीकरण में सहायक होती है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सक्षम होंगे --

1. श्रमिक सहभागिता का अर्थ जानने में
2. श्रमिक सहभागिता के उद्देश्य समझने में।
3. श्रमिक सहभागिता का दृष्टिकोण जानने में।
4- श्रमिक सहभागिता के लाभ जानने में।

5.3 प्रबन्ध में श्रमिकों की भागीदारी (Workers Participation in Management)

औद्योगिक प्रबन्ध में श्रमिकों का भाग एक अत्यन्त ही लोचपूर्ण धारणा है जिसका अर्थ है उद्योग के विभिन्न पक्षों, उद्योगपतियों, श्रमिकों और सरकार ने अपने-अपने हितों को ध्यान में रखकर पृथक-पृथक बनाया है। उद्योगपति इसको संयुक्त परामर्श (Joint Consultation) और श्रमिक इसका अर्थ सहनिर्णय (Co Determination) समझते हैं। सरकार इन योजनाओं को ''औद्योगिक प्रजातन्त्र'' तथा ''समाजवादी समाज की स्थापना की पूर्वाभास'' समझती है। इसका अर्थ कुछ भी लगाया जाये, किन्तु यह विचारधारा मूलतः इस दर्शन पर आधारित है कि श्रम एवं प्रबन्ध उद्योग के सहस्वामी है। अतः दोनों पक्षों की विभिन्न समस्याओं के बारे में विचार करने के लिए और निर्णय लेने का अवसर मिलना चाहिए।

सरल शब्दों में ''प्रबन्ध में कर्मचारियों के भाग लेने से तात्पर्य है कि उद्योग की नीति निर्धारण और लाभ दोनों में भाग ले। अर्थात् इस योजना के अन्तर्गत कर्मचारी मजदूरी को अतिरिक्त लाभ तथा

उद्योग से सम्बन्धित नीतियों के निर्धारण करने तथा उन्हें कार्यान्वित करने में सक्रिय सहयोग प्रदान करते हैं। इसमें श्रमिकों एवं मिल मालिकों के पारस्परिक सहयोग की आवश्यकता होती है। ऐसे सहयोग का आधार आपस में विचार-विमर्श होता है। इसका अर्थ यह नहीं कि उद्योगों में प्रबन्ध में समस्त श्रमिकों को बुलाकर उनकी सलाह ली जाय, ताकि वे अपनी अमूल्य सलाह दे सके। इससे श्रमकों और मालिकों के पारस्परिक सम्बन्धों में सुधार होगा। इसके अतिरिक्त औद्योगिक जनतन्त्रवाद पनपेगा।

अतएव प्रबन्ध में कर्मचारी भाग की व्यवस्था का अर्थ आवश्यक रूप से निर्णय लेने में हिस्सा बांटने से ही नहीं है। सहभागिता सूचकांकों के आदान-प्रदान में भी हो सकती है जिसे निष्क्रिय भागिता कहा जा सकता है और प्रबन्ध में कर्मचारी का भाग निर्णय लेने तथा उसकी क्रियान्वित में भी हो सकता है कि जिसे सक्रिय भागिता कहा जा सकता है।

5.4 प्रबन्ध में कर्मचारियों की सहभागिता की व्यवस्था के उद्देश्य

5.4.1 आर्थिक दृष्टिकोण से

इस व्यवस्था का उद्देश्य श्रम एवं प्रबन्ध में सहयोग की स्थापना द्वारा उत्पादकता में वृद्धि के साथ-साथ औद्योगिक सम्बन्धों में सुधार करना है।

5.4.2 मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से

इस व्यवस्था के मुख्य उद्देश्य उद्योग से मानवीय तत्वों को मान्यता प्रदान करना, कार्य में गर्व की भावना उत्पन्न करना, आत्माभिव्यक्ति के लिए स्वतन्त्रता एवं अवसर प्रदान करना और श्रम तथा प्रबन्ध के हितों का एकीकरण करना आदि है।

5.4.3 सामाजिक दृष्टिकोण से

औद्योगिक विवादों को दूर करना, औद्योगिक शान्ति के लिए

वातावरण तथा दशाएँ उत्पन्न करना है, अथवा

1. सेवा नियोजकों एवं श्रमिकों के बीच पैदा होने वाले संघर्षों एवं मत मतान्तरों के अन्त के लिए।
2. औद्योगिक उत्पादकता में वृद्धि करने के लिए एवं श्रमिकों की कार्यक्षमता में वृद्धि करने के लिए।
3. श्रमिकों में उद्योग के प्रति अपनत्व की भावना का अभ्युदय करने के हेतु लगाव पैदा करने हेतु।
4. श्रमिकों को आत्मभिव्यजंना (Self Expression) का अवसर प्रदान करने हेतु।
5. विवेकीकरण एवं वैज्ञानिक प्रबन्ध की योजनाओं को कार्यरूप देने के लिए एंव उनको सफल बनाने के लिए।
6. श्रमिकों को अभिप्रेरणा देने के लिए।
7. स्वस्थ श्रम पूँजी के सम्बन्धों का निर्माण करने के लिए।
8. देश में औद्योगिक शान्ति बनाये रखने के लिए।
9. औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना के लिए।
10. समाजवादी समाज की स्थापना के लिए।

प्रबन्ध में श्रमिक भाग के विभिन्न रूप

1. सहभागिता (Copartnership)
2. संचालक मण्डल (Board of Direcrtor)
3. सयुक्त परामर्श समिति (Joint Consultantion Committee)

5.5 सहभागिता के चरण

Dr. Mhetras के अनुसार प्रबन्ध के सहभागिता के पाँच चरण

हैं :-

1. सूचनात्मक सहभागिता (Informative)

सूचना सहभागिता कर्मचारियों के प्रबन्ध में भाग लेने का सबसे हल्का रूप है क्योंकि सदस्यों को यहाँ पर उपलब्ध की गई सूचनाओं की गहरी छानबीन का अधिकार नहीं होता है। ये सूचनाएं उत्पादन, आय व्यय का चिट्ठा एवं विभागों की प्रगति से सम्बन्धित होती है।

2. परामर्श सहभागिता (Consultative)

इस स्थिति में सदस्य मिलकर पारस्परिक भावनाओं एवं विचारों का आदान-प्रादान करते हैं। ऐसी सहभागिता में कैण्टीन, कल्याण सुविधाएं, उत्पादन एवं कार्य विधियाँ, सुरक्षा, मकान एवं कम्पनी की प्रगति आदि के सम्बन्ध में परामर्श प्राप्त किये जाते हैं, किन्तु कर्मचारी द्वारा प्रदत्त सुझाव प्रबन्ध द्वारा स्वीकार या अस्वीकार किये जा सकते हैं।

3. साहचर्य सहभागिता (Associate)

ऐसी सहभागिता के स्तर पर सदस्य सूचनाएं प्राप्त करते हैं और उन पर विचार विमर्श करते हैं। विचार विमर्श के पश्चात् सुझाव भी प्रदान किये जाते हैं। इन सुझावों की प्राप्ति के लिए सदस्यों का उत्पादन प्रणालियों एवं कार्यों में कैसे सुधार किया जाय उत्पादन एवं विक्रय कार्यक्रम, संगठन एवं प्रतिष्टान की सामान्य आदि के मामले सौंपे जाते हैं।

4. प्रशासकीय सहभागिता (Adminstrative)

ऐसी सहभागिता प्रबन्ध के कार्यों मे भाग लेने से सम्बन्धित होती है तथा प्रबन्धकीय अधिकारों एवं दायित्वों में सम्मिलित होता है। यह सहभागिता, कल्याण एवं सुरक्षा कार्यों, व्यवसायिक, प्रशिक्षण, कार्यविधि, सारणीयन या सूचीयन, छुट्टियाँ आदि मामलों में प्रशासकीय तथा पर्यवेक्षकीय अधिकारों का प्रयोग करने की स्वतंता होती है।

5. निर्णयात्मक सहभागिता (Decisive)

इस सहभागिता में निर्णय सम्बन्धी मामलों में कर्मचारियों द्वारा भाग लिया जाता है, यह सहभागिता प्रबन्ध की निर्णयात्मक पंक्ति में हिस्सा बटाती है। आर्थिक, वित्तीय, प्रशासकीय नीतियों आदि के सम्बन्ध में लिये जाने वाले निर्णयों में कर्मचारी भाग लेते हैं और निर्णय में अपना सहयोग प्रदान करते हैं।

5.6 श्रमिकों को उद्योग के प्रबन्ध में भाग देने का लाभ

1. पारस्परिक सद्‌भावना की स्थापना

विशाल उत्पादन गृहों में प्रबन्ध और श्रम के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध न होने के कारण वे एक दूसरे को सन्देह और अविश्वास की दृष्टि से देखते हैं। ऐसा इसलिए होता है कि दोनों ही वर्ग एक दूसरे की समस्याओं के बारे में कुछ जानते हैं। लेकिन जब श्रमिकों को प्रबन्ध में भाग दिया जाता है और दोनों पक्ष समान स्तर पर बैठकर आपसी समस्याओं को समझने का प्रयत्न करते हैं तो उनमें सद्भावना होती है।

2. उत्पादक एवं उत्पादन में वृद्धि

इस योजना के लागू होने से श्रमिक वर्ग में उत्साह तथा संस्था के प्रति एकत्व की भावना का संचार होता है। श्रमिक वर्ग अधिक परिश्रम और लगन से कार्य करता है जिससे उसकी कार्यक्षमता तथा उत्पादन में वृद्धि होती है, लागत मूल्य में कमी आती है।

3. औद्योगिक शान्ति में सहायक

औद्योगिक संघर्षो का मुख्य कारण पारस्परिक अविश्वास है लेकिन यह योजना दोनों पक्षों को एक दूसरे के निकट लाती है और उनमें पारस्परिक सहयोग की भावना जागृत करके विभिन्न विरोधी समस्याओं पर निर्णय लेने में सहायक होती है।

4. विवेकीकरण एवं वैज्ञानिक प्रबन्ध की योजना में सहायक

सामान्यतः श्रमिकों द्वारा विवेकीकरण और वैज्ञानिक प्रबन्ध की योजनाओं का विरोध किया जाता है लेकिन यदि यह योजना इनकी राय से संयुक्त परामर्श के आधार पर क्रियान्वित की जाती है तो इसमें सफलता मिलती है।

5. औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना -

यह योजना औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना में काफी सीमा तक सहायक होती है क्योंकि संयुक्त प्रबन्ध परिषद् के मंच पर आकार प्रबन्ध वर्ग के साथ बैठने में श्रमिक वर्ग में गौरव की भावना पैदा होती है और वह अपना सामाजिक स्तर ऊंचा अनुभव करता है।

5.7 सारांश

औद्योगिक सम्बन्धों को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक है कि श्रमिक सहभागिता को बढ़ाया जाय। यह आज आधुनिक संगठनों के लिए अत्यन्त आवश्यक माना जाता है। प्रबंध में कर्मचारियों की सहभागिता की व्यवस्था के आर्थिक, मनोवैज्ञानिक तथा समाजिक दृष्टिकोण पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त प्रबंध में श्रमिक भाग के रूपों में सहभागिता, संचालक मण्डल तथा संयुक्त परामर्श समिति पायी जाती है। श्रमिक सहभागिता के पांच चरण सूचनात्मक, परामर्श, साहचर्य, प्रशासकीय तथा निर्णयात्मक होते हैं। श्रमिकों को उद्योग के प्रबंध में भाग देने के अनेक लाभ होते हैं जिनमें से कुछ लाभ पारस्परिक सद्भाव की स्थापना, उत्पादक एवं उत्पादन में वृद्धि, औद्योगिक शान्ति में सहायक, विवेकीकरण एवं वैज्ञानिक प्रबंध की योजना में सहायक तथा औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना प्रमुख रूप से होती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि श्रमिक सहभागिता के द्वारा संगठनों में उच्चकोटि के औद्योगिक सम्बन्धों की स्थापना होती है तथा संगठन में कार्यरत श्रमिकों को

मनोबल की बढ़ोत्तरी होती है।

4.8 बोध प्रश्न

प्र01 प्रबन्ध में श्रमिक हिस्सेदारी से आप क्या समझते हैं? इसके प्रमुख उद्देश्यों का वर्णन करें।

प्र02 प्रबन्ध में श्रमिक भाग के विभिन्न रूपों का संक्षेप में वर्णन करें।

प्र03 प्रबन्ध में श्रमिक हिस्सेदारी के महत्व को रेखांकित करें।

3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1 योडर, डेल-''पर्सनेल मैनेजमेन्ट एण्ड इन्डस्ट्रियल रिलेशन्स'' प्रिन्टिक हाल, नई दिल्ली-1980

2 मैक्ग्रेमर डगलस - ''द ह्यूमन साइड आफ इन्टरप्राइस'', मैक्ग्राहिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क, 1964

3. फिलप्पों एडविन बी0-''पर्सनेल मैनेजमेन्ट, मैक्ग्राहिल टोक्यो, 1981

NOTES